॥ રામ ॥

॥ रामकथा ॥

मोरारिबापू

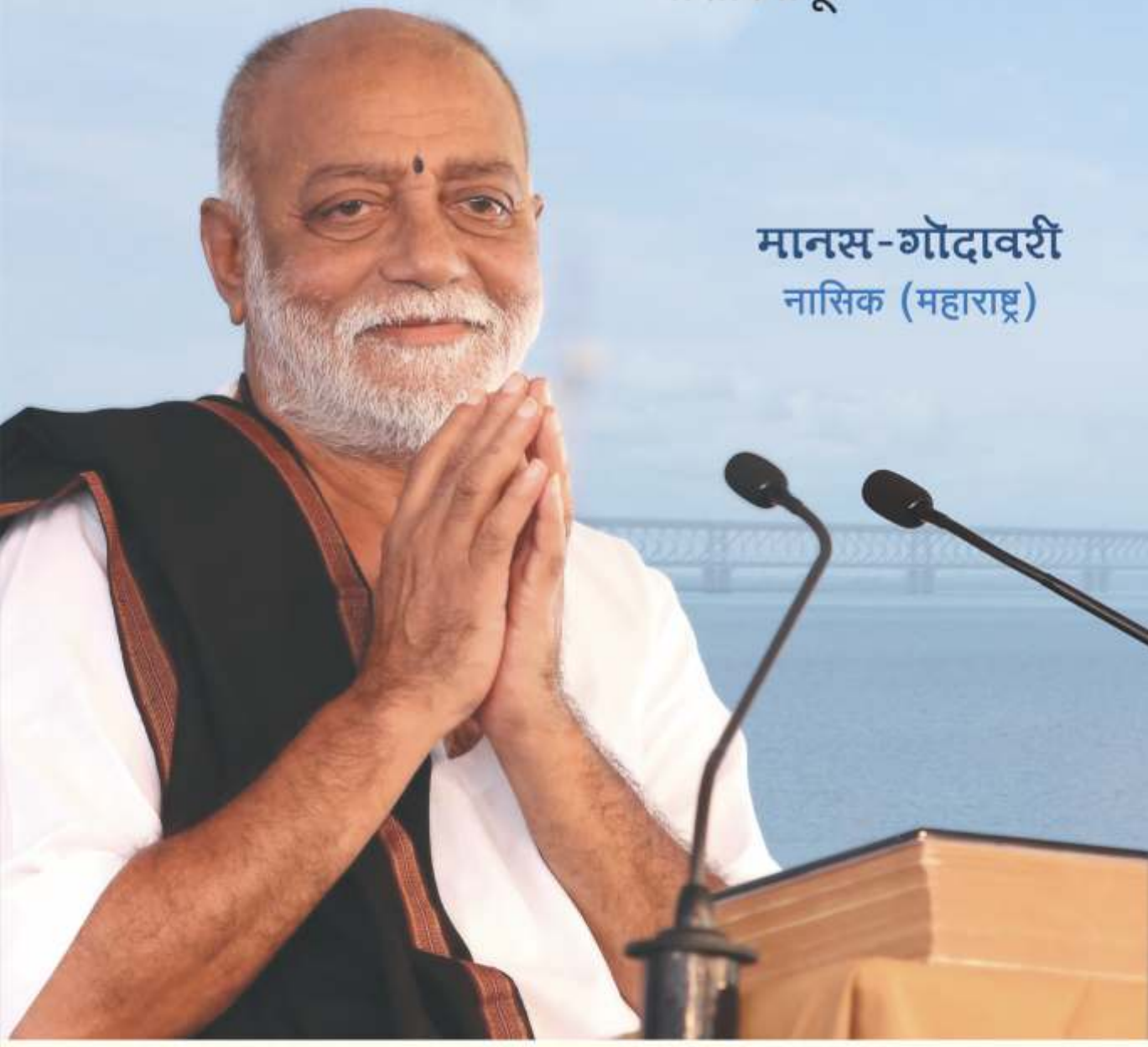

मानस-गोदावरी

नासिक (महाराष्ट्र)

सुरसरि सरसइ दिनकर कन्या । मेकलसुता गोदावरि धन्या ।।
अनुज समेत गए प्रभु तहवाँ । गोदावरि तट आश्रम जहवाँ ।।

ॐश्री सिद्ध पातालेश्वर महादेव मंदिर

|| रामकथा ||
मानस-गोदावरी

मोरारिबापू

नासिक (महाराष्ट्र)
दिनांक : ०५-०९-२०१५ से १३-०९-२०१५
कथा-क्रमांक : ७८१

प्रकाशन :
अक्टूबर, २०१६

प्रकाशक
श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट,
तलगाजरडा (गुजरात)
www.chitrakutdhamtalgajarda.org

कोपीराईट
© श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट

संपादक
नीतिन वडगामा
nitin.vadgama@yahoo.com

रामकथा पुस्तक प्राप्ति सम्पर्क-सूत्र :
ramkathabook@gmail.com
+91 704 534 2969 (only sms)

ग्राफिक्स
स्वर एनिम्स

प्रेम-पियाला

नासिक (महाराष्ट्र) में दिनांक ५-९-२०१५ से १३-९-२०१५ दरमियान पावन कुंभ के महापर्व पर मोरारिबापू ने रामकथा का गान किया। जहां प्रभु ने निवास किया है और जहां गोदावरी बह रही है ऐसी परम मनोहर भूमि में गाई गयी इस रामकथा को बापू ने 'मानस-गोदावरी' विषय पर केन्द्रित की।

गोदावरी के तट पर लक्ष्मणजी ने वैराग्य, ज्ञान, भक्ति, माया, जीव और ईश्वर के संदर्भ में पांच आध्यात्मिक प्रश्न पूछे और रामजी ने उसको उत्तर दिये। लक्ष्मणजी की जिज्ञासा, शूर्पणखा का नाक-कान काटना, खर-दूषण का निर्वाण, मारीच-वध और सीता का अपहरण जैसे इस भूमि पर हुए पांच प्रसंगों का बापू ने तात्त्विक विश्लेषण किया।

गोदावरी का विशिष्ट दर्शन व्यक्त करते हुए मोरारिबापू ने ऐसा निवेदन किया कि कोई भी नदी के पांच लक्षण है और ये गोदावरी में भी दिखते हैं। नदी का पहला लक्षण है प्रवाहमान रहना, गतिशील रहना। दूसरा लक्षण है किसी की खोज करना। तीसरा किसी को अस्पृश्य न समझना और किसी को महानता न देना बल्कि सभी का समादर करते हुए बहना। चौथा लक्षण है आंतर्-बाह्य हरा-भरा कर देना और पांचवां लक्षण है कि कोई उसमें डूबकी लगाये। और ये पांचों लक्षण रामकथारूपी सरिता में भी है, ऐसा भी बापू ने प्रतिपादित किया।

'गोदावरी' शब्द के कोशगत एवं विविध भाषाओं में दिये गये अर्थों का निर्देश करते हुए बापू ने कहा कि 'गो'मानी इन्द्रिय और 'दावरी' का एक अर्थ है प्रकाश-किरण-उजाला। इसलिए जो हमारी इन्द्रियों को प्रकाशित करे उसका नाम गोदावरी। बापू का ऐसा सूत्रात्मक निवेदन भी रहा कि गोदावरी ऐसी माँ की गोद है, जो सबको अपनी गोद में आवरी ले। कथा स्वयं गोदावरी है क्योंकि उसकी गोद में हम मोद-प्रमोद कर रहे है।

तात्त्विक दृष्टिकोण से गोदावरी का दर्शन करते हुए बापू ऐसे निष्कर्ष पर भी आये कि गोदावरी के तट पर आने से शाप, ताप, संताप मिटता है। दूसरा, राम के आने के बाद यहां ऋषि-मुनि भयमुक्त होकर भजन-साधना करते हैं। तीसरा, गोदावरी के तट पर परमात्मा के मुख से सत्संग सुनने को मिलता है। चौथा, गोदावरी का तट व्यक्ति को भयमुक्त विचरण करने का मौका देता है और पांचवां, गोदावरी के तट पर तात्त्विक संदेश ये है कि आप स्वर्ग की कामना छोड़ दो।

'मानस-गोदावरी' के माध्यम से मोरारिबापू ने गोदावरी के तट पर हुई प्रभु की ललित नरलीला की पश्चाद्भू में मनभर वार्तालाप किया।

– नीतिन वडगामा

मानस-गोदावरी : १

'मानस' का ऐसे स्वाध्याय करो कि 'मानस' तुमसे प्रेम करे

सुरसरि सरसइ दिनकर कन्या । मेकलसुता गोदावरि धन्या ।।
अनुज समेत गए प्रभु तहवाँ । गोदावरि तट आश्रम जहवाँ ।।

बाप! भगवान रामजी ने जहां निवास किया ये नासिक पंचवटी; और भगवान त्र्यंबकेश्वर महादेव बिराजमान है इस तीर्थ भूमि; और जहां गोदावरी नदी बह रही है ऐसे पावन तीर्थ में और वो भी कुंभ के महापर्व के अवसर पर और विशेष रूप में अभी-अभी यहां कहा गया; एक तो श्रावण मास, जन्माष्टमी का त्यौहार, शिक्षक दिन का भी स्मरण दिया गया सर्वपल्ली डो.राधाक्रिष्नन का जो आध्यात्मिक और दार्शनिक महापुरुष; तो ऐसे पावन अवसर पर रामकथा का यहां आयोजन हुआ। एक मनोरथ कायम रहता है कि परमात्मा करे तो जहां-जहां कुंभ जब-जब हो तब एक बार हम जाकर स्नान भी करें और रामकथा का गायन भी करें। वो काम भगवत्कृपा से चल रहा है। करीब-करीब जहां-जहां कुंभ होता है वहां भगवत्कृपा से ये अवसर प्राप्त होता है। यहां भी इन दिनों में कथा कहने का मनोरथ था। व्यासपीठ के प्रति अपनी श्रद्धाभाव अथवा तो समर्पण जो कहो, रखनेवाले पूरे जगत में कई परिवार है। इनमें से मेरे व्यासपीठ समर्पित कुछ परिवार ने आकर मेरे से मनोरथ किया कि बापू, ये कथा में हमें निमित्त बनाईए। और मैंने कहा कि ठीक है, आप अपना मनोरथ पूरा करे। तो कुछ व्यासपीठ समर्पित परिवारों ने ये कथा का निमित्तमात्र बनकर आयोजन किया। और आरंभ के दिन में आज मुझे भी आने में देर हुई। पूज्य ज्ञानदासबापू और पूरी मंडली को में प्रणाम करता हूं। हमारे पूजनीय मुनिजी महाराज जब भी अनुकूलता होती है, प्रेम के नाते आ ही जाते हैं। आप आये,

आशीर्वाद दिया, मार्गदर्शन किया, अपना समय दिया। मैं प्रणाम करता हूं। अन्य सभी को कथामंडप में बिराजमान संतगण और पूरे कुंभ में जितने अखाड़े बिराजमान है वैष्णव, संन्यास अथवा जो-जो इन सभी में बिराजमान वो सब के आशीर्वाद हमारे साथ है। मैं पूरे कुंभ में बिराजमान सभी संतों को, महंतों को, मंडलेश्वर को, आप सब को साथ में रखकर व्यासपीठ से प्रणाम करता हूं।

मुझे बताया गया कि हमारे ठक्करसाहब और उनका पूरा परिवार जिसके यहां मेरा निवास है। आप ने बहुत हर प्रकार से सहयोग किया ये आप का भाग्य है। आप का ये नसीब है कि आप जुड़ गये। कितना बड़ा अवसर आप को प्राप्त हुआ! और बाकी सभी मेरे श्रावक भाई-बहन इतनी सुंदर व्यवस्था बनाकर बैठे हैं इसलिए सभी को व्यासपीठ से मेरा प्रणाम। आप अहेतु और केवल स्वान्तः सुखाय कोई भी सत्कार्य का आरंभ करो तो उसमें सहयोग की आहुतियां तो अपने आप हर क्षेत्र से आने लगती है। आप आये, आप को भी धन्यवाद! मेरी एक प्रार्थना है सभी को कि यहां तो कितने संत, कितने महापुरुष है! जहां अवसर मिले सुनने जाना, सत्संग करने जाना। जो आप को करना हो सो, हर जगह सेवा हो रही है उसमें भी शरीक होना। सब जगह प्रसाद वितरण होता है, अन्नक्षेत्र चलता है। लेकिन हमारे छोटे-से पंडाल में जितने लोग कथा सुनने आये, और कथा सुन न सके वो भी, मेरा आप सब को ख़ास सौराष्ट्री निमंत्रण है, काठियावाडी निमंत्रण है कि आप कथा भी सुनियेगा और कथा के पश्चात् रोज यहां प्रसाद लेना। ये गोदावरी माँ का प्रसाद है। आप भजन भी करें और भोजन भी करें।

मैं सोच रहा था इस बार कुंभ के पावन अवसर पर रामकथा के अंतर्गत कौन-से बिंदु को स्पर्श करूं? मन में गोदावरी का स्मरण चल रहा था। यद्यपि गोस्वामीजी ने 'रामचरित मानस' में तीन बार, केवल तीन बार 'गोदावरी' शब्द का प्रयोग किया है। ये त्रिसत्य है। त्रिसत्य की बड़ी महिमा है, आप जानते हैं। इस बार मेरी व्यासपीठ रामकथा के अंतर्गत ख़ास करके 'मानस'के अंतर्गत गोदावरी तत्त्व क्या है? इसके बारे में हम सब मिलकर संवाद करेंगे। कोई उपदेश नहीं, क्योंकि उपदेश करने की औकात हमारी नहीं है। उपनिषदकार कह सकते हैं, 'एषः उपनिषद।' 'एषः आदेश।' मैं आप के साथ नव दिन 'मानस' के आधार पर कुछ सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा करूंगा। हम सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा करेंगे। तो इस कथा का विषय होगा 'मानस-गोदावरी।' तो, फ़िर एक बार इस पंक्ति गाये-

सुरसरि सरसइ दिनकर कन्या ।
मेकलसुता गोदावरि धन्या ।।
अनुज समेत गए प्रभु तहवाँ ।
गोदावरि तट आश्रम जहवाँ ।।

गोदावरी नदी के तट पर पांच लीलाएं की है प्रभु ने 'मानस' में। रामकथा के अंतर्गत भगवान ने यहां पंचवटी में कुछ काल निवास किया वनवास के आख़िरी यात्रा में। जहां से ललित नरलीला का प्रारंभ किया है वो है गोदावरी तट। पंचवटी में पंच वट की भी तो महिमा है। और लक्ष्मणजी ने भगवान को पांच आध्यात्मिक प्रश्न पूछे है। मैं आज पहले दिन इतना ही कहकर आगे बढ़ूं कि गोदावरी के तट पर पांच प्रसंग की महिमा है 'मानस' के आधार पर। प्रसंग एक 'रामगीता।' गीधराज से भेंट भई। और भगवान गोदावरी के तट पर जब निवास करने आये उसके बाद पहली घटना जो घटती है वो लक्ष्मणजी की जिज्ञासा है। यद्यपि ये स्वतंत्र विषय है।

दूसरा प्रसंग है, शूर्पणखावाला प्रसंग। तीसरा प्रसंग, गोदावरी के तट पर जिसमें प्रभु खर-दूषण आदि चौदह हजार असुरों का निर्वाण करते हैं ये तीसरा प्रसंग गोदावरी के तट का। चौथा प्रसंग है, मारीच, परम स्नेही मारीच-वध का प्रसंग। यद्यपि वो भी स्वतंत्र प्रसंग है। और पांचवां प्रसंग, जिसके बाद प्रभु पंचवटी छोड़ते हैं वो है माँ सीता का अपहरण। उसके बाद प्रभु जानकी की खोज में निकल जाते हैं। और भगवान राम की ललित नरलीला आगे के अध्याय में प्रवेश करते हैं। गोस्वामीजी ने 'मानस' में नदीओं के साथ बहुत तुलना की है।

पूँछेहु रघुपति कथा प्रसंगा।
सकल लोक जग पावनि गंगा।।

भगवान शिव का मुख का ये वचन है कि पार्वती, रामकथा सकल लोक को पवित्र करनेवाली गंगा है। यानी रामकथा को गोस्वामीजी गंगा कहते हैं। और तुलसी ने एक और बात भी की है-

रामकथा मंदाकिनी चित्रकूट चित चारु ।
तुलसी सुभग सनेह बन सिय रघुबीर बिहारु ।।

वहां रामकथा को मंदाकिनी कह दिया।

सिवप्रिय मेकल सैल सुता सी ।
सकल सिद्धि सुख संपति रासी ।।

तो, कभी मेकलसुता भी कह दिया। तो तुलसीदासजी रामकथा को नदीओं के साथ तोलते हैं इसका मतलब ये है कि शायद गोस्वामीजी चाहते हैं कि कथा एक प्रवाह है, जड़ नहीं है। कथा ये केवल गतानुगति नहीं है। कथा ये सरिता का कलकल नाद करता हुआ एक प्रवाह है। भगवान की कथा बंधियार नहीं, संकीर्ण नहीं। जो लोग कहते हैं कि रामकथा एक बार सुनी, दो बार सुनी, फ़िर उसमें क्या सुनना? उसको मैं विनय के साथ कहूंगा कि उसके नसीब नहीं जागे! क्योंकि आलोचना करने के लिए भी समझ तो होती है; तभी तो आलोचना करते हैं! लेकिन नसीब नहीं! ये प्रवाह है। उसमें रोज नूतनता है। हम तो रोज नया पाते हैं। तो भगवत्कथा ये प्रवाह है। कई महानुभाव ऐसा कह करके जरा ऐसे कि ये तो कथाकार है! ऐसा प्यार से कहते हैं! लेकिन जमाने को कुबूल करना पड़ेगा कथाकारों ने ही तत्त्व को, सत्त्व को प्रवाहित रखा। तथाकथित लोगों ने जड़ कर दिया।

अेवा ज गुना में कर्या छे, कुबूल हा!

गुजराती में शायर कहता है, ऐसा गुना मैंने भी किए है। कुबूल!

मारुं जे थवुं होय ते थाय, जे थयुं'तुं कबीरनुं।

क्योंकि कबीर ने क्रांति की थी। कबीर ने जड़ता की बेड़ियां तोड़ी थी।

एक माणसने मींढो गणवा,
भेगी थई छे नात कबीरा।

चंद्रेशनो शे'र। ये प्रवाह बहता रहा भगवतकथा के कारण। तो गोदावरी एक प्रवाह है, जिसको व्यासपीठ अक्सर कहा करती है कि व्यासपीठ को लगता है कि परंपरा प्रवाही होनी चाहिए, जड़ नहीं।

गोदावरी का तात्त्विक रूप भी हमें समझना चाहिए। नदीओं का तात्त्विक रूप समझा जाय तो तीर्थयात्रा में आनेवाले लोग श्रद्धा से स्नान तो करते हैं; खुद स्वच्छ हो जाते हैं। लेकिन तीर्थों को अपवित्र करके चले जाते हैं! ये बंद हो सकता है, यदि आंतरिक तत्त्व क्या है ये हम समझ सकें। हमें जो संवाद करना है वो एक आंतरिक प्रवाह की, एक आंतरिक गोदावरी की चर्चा करनी है। जो पांच प्रसंग है उसमें तो रामकथा का आख़िरी अंजाम है इसलीए इस गोदावरी तट पर स्वयं प्रभु का निवेदन है-

तुम्ह पावक महुँ करहु निवासा ।

'सीते, तुम अग्नि में समाविष्ट हो जाओ। मैं अब निशाचर नाश करना चाहता हूं।' ललित नरलीला का श्री गणेश गोदावरी के तट पर हुआ। चित्रकूट की भूमि पर तो विहार तत्त्व है। गोदावरी के तट पर जो रामलीला चली उसकी एक महिमा है।

मैं कथा का आरंभ 'बाप' शब्द से शुरू करता हूं तो कुछ कथाओं से भाव में आनेवाले लोग तालियां बजाते हैं। मैं प्रार्थना कर सकता हूं कि ये ताली बजाना बंद हो। ऐसा तो मैंने अभी क्या कहा? और कथा सुनो फ़िर कभी ताली बजाना। और मोरारिबापू के लिए नहीं।

रामनाम शुं ताली लागी,
सकल तीरथ एना तनमां रे।
वैष्णव जन तो तेने रे कहीए,
जे पीड पराई जाणे रे...

मैं प्रवाह के लिए प्रयत्न कर रहा हूं और तुम बांधने की कोशिश कर रहे हो! मैं डेम नहीं हूं! कवि

काग ने कभी गांधी बापू के लिए लिखा था, 'हे गांधी! तेरे प्रवाह को रोकने के लिए न जाने कितना प्रयत्न हुआ था लेकिन तेरी सरवाणी को कोई रोक न पाया।' भगवान राम परंपरा में चले यद्यपि राम ने कई परंपरा सविनय तोड़ी। परिवर्तन किया है। और लक्ष्मणजी ने तो 'रामचरित मानस' में, यही भूमि है गोदावरीजी की जहां लक्ष्मणरेखाएं निर्मित की है।

तो, ये प्रवाहवाली बात मुझे ज्यादा पसंद आती है। तो कथा को केवल धार्मिक संमेलन भी मत समझना। एक बातचीत होगी आप के साथ। और ये सावन महिना। सावन महिना मारनेवाला महिना है!

ड़र है न मार डाले सावन का क्या ठिकाना?

अंदर का विकार बहुत सताएं तो सावन में शिव को भजो। सावन के सिवा कोई झूम के नहीं आता। तो बाप, एक तो पावन अवसर, पावन तीर्थ, पावन रामकथा, पावन संग महापुरुषों का। तो हम और आप मिलकर भीतर की गोदावरी को खोजे। और इस भीतर की गोदावरी के तट पर कहीं किसीका हरण तो नहीं हुआ? कहीं किसीका वध तो नहीं हुआ? किसीके नाक-कान तो नहीं काट दिये गये? कुछ ऐसी घटनाएं भीतर घटी। यहां सब घटा है। ये परम सत्य है।

ये पावन प्रदेश महाराष्ट्र का हम उसमें हमारी भीतरी एक प्रवाहित चेतनामय गोदावरी की खोज करें और रामकथा के सहयोग से हम कुछ यहां से अमृत पीकर जाये। हम आये हैं कुछ भीतरी अनुभूतियां का एकरार करने, तकरार करने के लिए नहीं। कोई एकाद बुंद, घूंट मिल जाय। सायंकाल का समय है। मैं आप को निमंत्रित करूं कि -

यारो! घीर आई है शाम, चलो मैकदे चले।

मैकदे यानी शराबखाना नहीं, प्रेमयज्ञ, हरिनाम, हरिनाम।

याद आ रहे हैं जाम, चलो मैकदे चले।

तुलसी की चौपाई। एक बात कहूं? 'मानस'का ऐसे स्वाध्याय करो कि तुम 'मानस'को प्रेम करो इसके बदले 'मानस' तुम से प्रेम करे। तुम जिस दिन 'मानस' की चौपाई ना पढ़ो तब चौपाई को रोना आये, इस आदमी ने आज मुझे गाया नहीं! 'मानस' प्रेम करे हमें। राम हमें प्रेम करे। हम तो करते हैं। वह परमतत्त्व है। नहीं पुकारेंगे तो क्या करेंगे? लेकिन रामकथा हमें प्रेम करे। 'श्रीमद् भागवत' हमें प्रेम करे। 'भगवद्गीता' हमें मोहब्बत करे। जिसकी 'मानस'की अनन्य उपासना होगी उसके बिना 'मानस' रह नहीं सकता। शास्त्र श्रावक को प्रेम करे। ये तब हो सकता है जब मेरा और आप का सब को आदर देते हुए एक शास्त्र के प्रति अनन्य भाव हो। 'दूसरो न कोई।' भगवान राम का एक वचन 'मानस' में है वो ही वचन मुझे कभी-कभी 'मानस' का पाठ करते हुए 'मानस' भी कहती हो ऐसा लगता है। राम कहते हैं, मुझे वो प्रिय है। वैसे 'मानस' भी कहता हैं, मुझे वो प्रिय है। मुझे उससे मोहब्बत है।

एक बानी करुनानिधान की।

मेरे गोस्वामीजी कहते हैं, करुनानिधान की एक बानी है। उनका एक वचन है।

सो प्रिय जाकें गति न आन की।

उसको मैं बहुत प्यार करता हूं जिसको अन्य गति नहीं। 'गतिस्वं गतिस्वं त्वमेका भवानी।' पाठ खंडित हो जाय और आप को महसूस हो जाय कि नित्य पाठ का 'मानस' आज उदास है। तूने मेरी दो चौपाईयां आज गाई नहीं! ग्रंथपरायणता; तो शास्त्र हमें मोहब्बत करे। उसकी याद फ़िर सतायें, कब कथा गाये?

तो 'मानस-गोदावरी', उसकी हम कुछ सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा करेंगे। तो सात कांड आप जानते हैं, 'बालकांड', 'अयोध्याकांड', 'अरण्यकांड', किष्किन्धाकांड', 'सुन्दरकांड', 'लंकाकांड', 'उत्तरकांड।' गोस्वामीजी 'मानस' के प्रथम सोपान में सात मंत्रों में कहते हैं-

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।
मङ्गलानां च कर्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ।।

फ़िर श्लोक को लोक तक पहुंचाने के लिए तुलसी लोकबोली में आये। और पांच सोरठें में-

जो सुमिरत सिधि होइ गन नायक करिबर बदन।
करउ अनुग्रह सोइ बुद्धि रासि सुभ गुन सदन।।
मूक होइ बाचाल पंगु चढ़इ गिरिबर गहन।
जासु कृपाँ सो दयाल द्रवउ सकल कलि मल दहन।।
नील सरोरुह स्याम तरुन अरुन बारिज नयन।
करउ सो मम उर धाम सदा छीरसागर सयन।।
कुंद इंदु सम देह उमा रमन करुना अयन।
जाहि दीन पर नेह करउ कृपा मर्दन मयन।।
बंदऊँ गुरु पद कंज कृपा सिंधु नररूप हरि।
महामोह तम पुंज जासु बचन रबि कर निकर।।

पंचदेवों की स्तुति की गोस्वामीजी ने। सूर्य, दुर्गा, गणेश, शिव और विष्णु। और फिर गुरुवंदना से 'रामचरित मानस' का पहला प्रकरण-

बंदऊँ गुरु पद पदुम परागा।
सुरुचि सुबास सरस अनुरागा।।
श्रीगुरु पद नख मनि गन जोती।
सुमिरत दिब्य दृष्टि हियँ होती।।
गुरु पद रज मृदु मंजुल अंजन।
नयन अमिअ दृग दोष विभंजन।।
सीय राममय सब जग जानी।
करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।।

'मानस'का पहला प्रकरण है गुरुवंदना। गुरुचरणरज से अपने नेत्रों को विवेकमय करके तुलसी आगे बढ़ते हैं। पूरे जगत को सीतारामम्य समझकर प्रणाम करते हैं। और फिर राजपरिवार की वंदना की। सब की वंदना करते-करते-

महाबीर बिनवउँ हनुमाना।
राम जासु जस आप बखाना।।

श्री हनुमानजी महाराज की वंदना की, जो नितांत अनिवार्य मानी गई है।

प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यान घन।
जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर।।

'विनयपत्रिका'की एक-दो पंक्ति-

मंगल-मूरति मारुत-नंदन।
बंदौं राम-लखन-बैदेही।
जे तुलसीके परम सनेही।।
सकल-अमंगल-मूल-निकंदन।
मंगल-मूरति मारुत-नंदन।।

●

अतुलितबलधामं हेमशैलाभदेहं
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम्।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं
रघुपतिप्रियभक्तं वातजातं नमामि।।
प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यान घन।
जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर।।

श्री हनुमानजी की वंदना; फिर सीताराम की वंदना; फिर क्रम में नाम की वंदना। और आज की कथा को विराम।

'मानस'का ऐसे स्वाध्याय करो कि तुम 'मानस'को प्रेम करो इसके बदले 'मानस' तुम से प्रेम करे। तुम जिस दिन 'मानस' की चौपाई ना पढ़ो तब चौपाई को रोना आये, इस आदमी ने आज मुझे गाया नहीं! 'मानस' प्रेम करे हमें। राम हमें प्रेम करे। हम तो करते हैं। वह परमतत्त्व है। नहीं पुकारेंगे तो क्या करेंगे? लेकिन रामकथा हमें प्रेम करे। 'श्रीमद् भागवत' हमें प्रेम करे। 'भगवद्गीता' हमें मोहब्बत करें। जिसकी 'मानस'की अनन्य उपासना होगी उसके बिना 'मानस' रह नहीं सकता। शास्त्र श्रावक को प्रेम करे। ये तब हो सकता है जब मेरा और आप का सब को आदर देते हुए एक शास्त्र के प्रति अनन्य भाव हो।

रामकथा हमें आंतर्-बाह्य रूप से हरा-भरा कर देती है

'मानस-गोदावरी', जो 'रामचरित मानस' अंतर्गत इस बात को इस कथा में चुनी गई है। उस प्रवाह में आगे बढ़ें इससे पूर्व दो-तीन जिज्ञासा है। 'यदि भक्ति ना करूं और केवल गरीब की सेवा करूं अथवा दूसरों की सहायता करूं तो भगवत् प्राप्ति हो सकती है?' ऐसा आपने पूछा है। जरा विचित्र-सा लगेगा लेकिन कृपया पहले तो कुछ भी करो और ये करने से मुझे उसकी प्राप्ति होगी वो ही भूल जाओ। प्राप्ति के प्रलोभन में किया गया कोई भी कर्म थोड़ा-बहुत दूषित हो ही जाता है। क्या गरीब की सेवा करने में ही इतना नहीं मिल जाता कि फ़िर सच्चिदानंद की प्रतीक्षा करे! 'मा फलेषु कदाचन।' ऐसा 'गीता'वाक्य हम भारतीयों को दूध में पिलाया गया है। तो एक बात तो ये कि ये करूं और ये मिले ये व्यापार बंद करे। दूसरी बात आपने पूछी कि मैं ध्यान और ये पूजा न करूं तो क्या चले? गरीबों की सेवा करने के लिए भी ओर बल मिलेगा; निराभिमानता आयेगी यदि आप कुछ ध्यान, कुछ सुमिरन, कुछ हरिनाम का आश्रय करोगे तो। वर्ना सेवा में अहंकार आ सकता है। इसलिए यही महान है और हरिनाम, ध्यान आदि-आदि ये सब गौण है, ऐसे कृपया तुलना न की जाय तो अच्छा है।

गांधी बापू आज़ादी दे पायें हमें लेकिन उसने प्रार्थना कभी नहीं छोड़ी। सही समय पर वो प्रार्थना करते रहते थे, कराते रहते थे। इसलिए मेरा स्पष्ट मानना है कि भजन, भक्ति आदि आप का जो भी कोई साधन हो; गरीबों की सेवा करो ही करो, ये बहुत जरूरी है। हमारे यहां एक सूत्र आया है कि 'मानवसेवा वो ही प्रभुसेवा।' अच्छा है। लेकिन

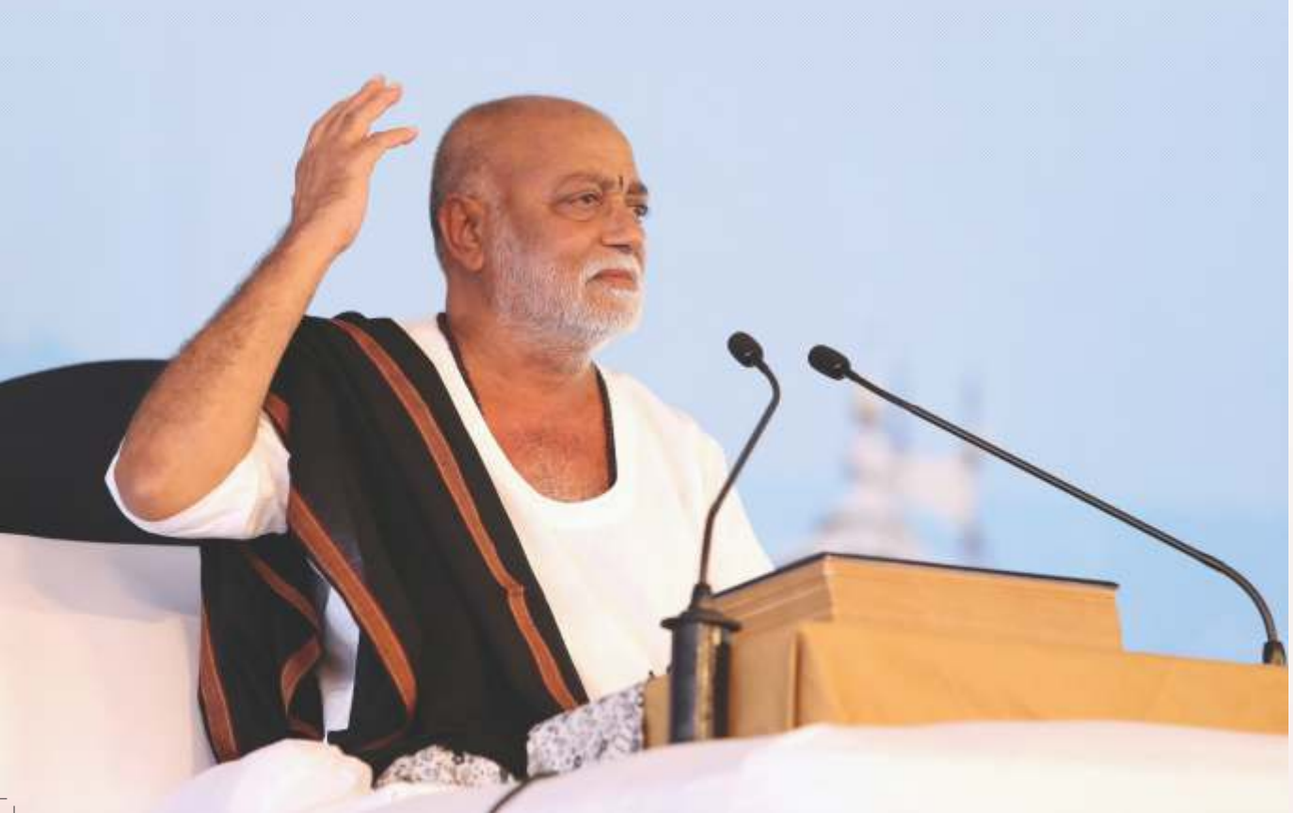

एक जैन मुनि ने पहले कोमेन्ट की है। आपने ऐसा कहा कि मानवसेवा वो ही प्रभुसेवा, ये बात पूर्ण नहीं है। जीवमात्र की सेवा ये प्रभुसेवा है। इसमें पहाड़ों की सेवा, नदीओं की सेवा, जल की सेवा, पृथ्वी की सेवा, प्रकृति के जितने भिन्न-भिन्न तत्त्व हैं ये प्रत्येक की सेवा होनी चाहिए। जैसे कि जल प्रदूषित न किया जाय, बिगाड़ न किया जाय, ये जल की सेवा है। आसमां को प्रदूषित न किया जाय। अत्यंत रासायणिक खाद्यों के द्वारा पृथ्वी के रस-कस को शोषित न किया जाय वो धरती की सेवा है। मानवसेवा तो करते ही हैं लेकिन जीवमात्र की सेवा। और जगद्गुरु आदि शंकराचार्य हम को सिखा गये 'भूतदया'; भूत मानी पांचों महाभूत। आकाश, पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि सब की सेवा; उसके प्रति करुणा। और मैंने भी आप से कई बार बातचीत की है कि विनोबाजी 'जय जगत' कहा करते थे। 'रामचरित मानस' में एक शब्द है संबोधन का 'जय जीव।' जीव मात्र की जय हो। जड़-चेतन सब की सेवा। जो आप करते हो उनको नकारो मत। तुम्हारे लिए ये ठीक है। उसको सिद्धांत मत बनाओ। प्रार्थना जरूरी है।

ऐसे तो आप ये भी कह सकते हो कि हम कथा-बथा नहीं सुनते, हम मानवसेवा करते हैं। तो करो। लेकिन कथा को बथा मत कहो! उसकी भी एक बहुत प्रवाही जगह है। मैंने कल भी कहा कि भगवत्कथा ये प्रवाह है। इसलिए मेरा मंतव्य है। आपने एक चित्र देखा होगा। एक चित्र आया था कि एक रेफ्युजी, एक गरीब आदमी अपनी बेटी को कंधे पर रखकर पेन बेच रहा है कहीं इधर-उधर भूख को मिटाने के लिए। और वो बच्ची कंधे पर सो गई है। निराश्रित है, असहाय है। भीख मांगने से बेहतर उसको लगा होगा कि कुछ छोटा-मोटा काम कर लिया जाय। वो फोटो पूरी दुनिया में गई। ब्रिटन में तो बहुत गई और लोगों ने देखते ही इतनी करुणा फूटी लोगों को कि सब लोगों ने उसका पता लगाकर दान का प्रवाह बहाया। कहते हैं, इस चित्र को देखकर एकाद लाख से ज्यादा पाउन्ड इकठ्ठे हुए। और वो उसको पहुंचाया गया। उस समय उसका निवेदन प्रणम्य है। उस आदमी ने कहा कि बहुत धन्यवाद मैं जगत का करता हूं कि मेरे इस चित्र को देखकर जो हकीकत है, आप लोगों ने बहुत उदारता से दान दिया। लेकिन मेरे जैसे कई लोग ऐसे घूम रहे हैं। मैं इस दान का अकेला उपयोग नहीं करूंगा, सब में बांटूंगा। ये बहुत प्यारा संकल्प था। काश! मैं इस आदमी को मिल सकूं! 'जय जीव।' व्यासपीठ जो बार-बार रटी जा रही है सत्य, प्रेम, करुणा। ये क्या है? तत्त्वत: यही तो है।

'मानस' करुणा का शास्त्र है। 'मानस' प्रेम का शास्त्र है। 'मानस' सत्य का शास्त्र है। वो हमें बहुत सावधान करता है। लेकिन आप ये कहे कि कथा की कोई जरूरत नहीं है तो ये आप का व्यक्तिगत निर्णय हो सकता है। तुम सेवा करो लेकिन तुम्हारी सेवा दूसरे परम साधनों को मिटाने की अथवा तो हटाने की कोशिश ये तुम्हारा अहंकार हो जायेगा। और ये अहंकार गति में बाधक हो सकता है। हरिनाम को पकड़े रहो। इससे सेवा में बल आयेगा। लोगों को पता है कि गांधी की प्रार्थनासभा में सभी धर्मों के लोग बैठते थे और बहुत आदर के साथ आख़िर में गाते थे-

रघुपति राघव राजा राम ।
पतित पावन सीता राम ।

दांभिक लोगों के द्वारा सही संदेश भी सफल नहीं होता। सही संदेश सही आदमी से जाता है तो लोग कुबूल करते ही है। तो प्रार्थना को बापू ने पकड़ रखी। आपने पढ़ा होगा कि आज़ादी मिली उससे पहले की एक प्रार्थनासभा में आंखें नमी थी गांधी की और उसने निवेदन किया था कि आज मेरा कोई सुनता नहीं है! मुझे लगता है कि मैं अरण्यरुदन कर रहा हूं! मेरी बात सुनी गई होती तो देश का बटवारा नहीं होता। मेरी बात सुनी गई होती तो पंजाब के टुकड़े न होते। मेरी बात

सुनी गई होती तो जो विभीषिका आई वो कभी विश्व के सामने न आती। और फ़िर दर्दपूर्ण एक वाक्य उसका था कि पहले मैं बहुत बड़ा आदमी माना जाता था। आज मैं बिलकुल छोटा आदमी बन चुका हूं। लेकिन इस आदमी ने प्रार्थना कभी नहीं छोड़ी। रामनाम नहीं छोड़ा। हरिनाम नहीं छोड़ा। जीवन कौन चला रहा है? अहेतु भगवत्नाम। प्रकृति के प्रत्येक तत्त्व की सेवा होनी चाहिए। हम आरती करते हैं तो जल का उपयोग करते हैं। बत्ती जलाते हैं तो अग्नि का उपयोग करते हैं। वायु का-धूप का उपयोग करते हैं। घुमाते हैं आकाश में। हम प्रत्येक तत्त्व की आरती करते हैं। आरती केवल एक मूर्ति की नहीं होती है। पांचों तत्त्व की होती है। तो सेवा खूब करो लेकिन सुमिरन छुटना नहीं चाहिए।

एक ओर प्रश्न, 'शास्त्र और पुराण में बापू, बहुत चरित्र है। 'महाभारत' में चरित्र की भरमार है। पुराणों में बहुत अच्छे-अच्छे चरित्र नायक है। फ़िर भी रामचरित्र और सीताचरित्र को ही महान क्यों माना जाता है?' अच्छा प्रश्न है। जिसने पूछा, नमन। पुराणों में, ग्रंथों में बहुत चरित्र है, यस। तुलसी ने भी यथासमझ सभी चरित्रों को बहुत आदर दिया है 'मानस' में। लेकिन रामचरित्र की महिमा इतनी क्यों है? कौन तुलना कर सके 'रामायण' की? लेकिन इस प्रवाह में आज 'रामचरित मानस' क्यों छाया हुआ है? क्यों? यद्यपि हमारी और आप की बहुत बार बात हुई है कि 'रामचरित मानस' में पांच चरित्र है। शिव चरित्र, उमा चरित्र, भरत चरित्र, हनुमंत चरित्र, भुशुंडि चरित्र। राम चरित्र में सीता चरित्र समाहित है। वाल्मीकि तो सीता चरित्र को ही महान कहते हैं। तुलसीदासजी ने 'रामचरित मानस' में पानी के-जल के पांच लक्षण बतायें। आप का ध्यान गया होगा तो इस चरित्रवाला प्रश्न भी सुलझ जायेगा। कोई भी जल लो आप। तो हम जब उसको पीयेंगे, पानी तो पानी है लेकिन उसका उपयोग कई तरह करेंगे। कोई तैरने के लिए करेंगे। कोई हार गया आदमी तो डूबने के लिए भी करेंगे। कई डुबोने के लिए भी करते हैं! पानी तो पानी है। लेकिन जल का कई रूप में हम उपयोग करते हैं। पीते तो रोज है। गोस्वामीजी कहते हैं, जल के तीन लक्षण है। चरित्र तो बहुत हैं, लेकिन रामचरित्र क्यों महान? क्यों 'रामचरित मानस' को लेकर हम घूम रहे हैं? आप क्यों नाच रहे हो? क्यों मुझे कल ऐसा महसूस हो रहा था कि मैं बता रहा था कि मुझे लगता है कि 'मानस' पुकार रहा है। एक महिना हो गया, अब तू गा। ये क्यों मेरा अनुभव है? क्या हो रहा है मुझे? ये पीड़ा क्यों? कोई कारण तो नहीं है इस पीड़ा का। पीड़ा बढ़ रही है। यही पीड़ा अल्लाह करे सब की हो कि मैं कृष्ण को भज नहीं पाया। सब को ये पीड़ा होनी चाहिए कि क्यों ये मेरे बुद्धपुरुष भूल गया? सत्यप्रकाश शर्मा का शे'र है-

उन आंखों की अज़ीब गहराईयों में,
समंदर समाना चाहता है।

ऐसी आंखें हम क्यों भूल गये? जो राम की आंखें है, जो कृष्ण की आंखें है, जो प्रभु की आंखें है। आंखें मीन्स दृष्टि, विचारधारा, जीवन का एक अनोखा दर्शन; उसको हम क्यों भूल गये? शे'र सुनिए-

ये आप पर है तुम चाहो न चाहो,
लेकिन तुम को ज़माना चाहता है।

सब से बड़ी विपत्ति यही है 'मानस' दर्शन में कि जब आदमी का हरिभजन छूटे।

कह हनुमंत बिपति प्रभु सोई ।
जब तव सुमिरन भजन न होई ।।

एक बात मेरे श्रावक भाई-बहन याद रखना कि जब ये स्मृति खंड़ित होती है तब आंखों में कुछ और चीज़ें जगह पाना शुरू करती है। और वो चीज़ है द्वेष, राग, स्पर्धात्मक मूल्यांकन। ये चीज़ है निंदा, असूया। ये चीज़ है अमर्ष। सावधान! मेरे हनुमानजी कहते हैं, हरि, इस

संसार में हम जैसों के लिए सब से बड़ी विपत्ति यही है कि तेरी स्मृति छूट जाय। नगीनदासबापा ने कहा, बापू, गरीबी से कष्ट होता है। अभाव के कारण आदमी पीड़ित होता है, लेकिन गरीबी से कभी किसी संस्कृति का नाश हुआ हो ऐसा विश्व में कभी नहीं हुआ। विश्व में कई सभ्यता आई और गई। ये गरीबी के कारण नहीं गई है, केवल विलासिता के कारण गई है। लंका की विलासिता की कोई कमी नहीं थी। लंका जली, नाश हुआ। कोल-किरात बहुत गरीब थे लेकिन उनकी सभ्यता नष्ट नहीं हुई। और 'मानस' के प्रसंग से देखें तो विलासिता में डूबे-मरे फिर जी नहीं पाये। और जो गरीब भालू-बंदर थे वो मरे तो सही लेकिन रामकृपा से फिर जीवित हो गये। कोई गरीब न रहे दुनिया में, अल्लाह करे। यहां जो गरीबी है वो है साधुपने की गरीबी। गंगासती कहती है-

भक्ति रे करवी एणे रांक थईने रहेवुं...

साधु का परिचय क्या? फ़कीरों का कौन-सा लक्षण? 'मानस' में तुलसीदास ने साधु का परिचय वेश और आश्रम के द्वारा दिया ही नहीं। यद्यपि वेश और आश्रम की महिमा है। तुलसी साधु की परिभाषा तो बिलकुल अनोखी और कुंआरी करते हैं-

साधु चरित सुभ चरित कपासू ।
निरस बिसद गुनमय फल जासू ।।

साधु की परिभाषा; ये कपास के फूल की साथ जोड़ते हैं। साधु कोई विशेष रूप से पृथ्वी पर नहीं आता। जैसे हम सब आते हैं वैसे वो भी आते हैं माँ-बाप के कारण। जैसे हर पौधें अपना फूल निकालते हैं वैसे ये कपास का फूल निकलता है। सर्व सामान्य बात है। उनमें कोई विशेषता नहीं है। कपास की मूल तीन पत्ती होती है। ये जो तीन पंखुडी होती है वो बिलकुल हरि होती है और इससे जो फूल निकलता है कपास वो बिलकुल नीरस, शुभ्र, कोई रंग नहीं। साधु वो है नीरस, कोई आसक्ति नहीं। उसकी शुभ्रता को कोई दाग नहीं। और गुणमय है।

लोग कहते हैं, साधु-संतों को दु:ख नहीं होता। ये सही है या गलत? मैं आप से पूछुं। ये दु:खालय संसार है। यदि रेगिस्तान में किसी साधु को खुले पैर चलाओ तो उसको भी धूप लगेगी। ये जगत यही दु:खभरा है तो साधु को भी दु:ख होगा। हां, फ़र्क इतना, हमको दु:ख हमारे लिए होता है, साधु को दु:ख दूसरों के लिए होता है। इसलिए गोस्वामीजी कपास के साथ साधुचरित्र की वंदना करते हुए दूसरी पंक्ति लगा देते हैं-

जो सहि दुख परछिद्र दुरावा ।
बंदनीय जेहिं जग जस पावा ।।

तुलसी ने साधु का परिचय बिलकुल अनोखे ढ़ंग से प्रस्तुत किया। नरसिंह मेहता ने ठीक कहा, 'पीड पराइ जाणे रे।' अपनी पीड़ तो हम सब को है। नरसिंह का वैष्णव संकीर्ण नहीं था।

जल के पांच लक्षण तुलसी ने रामचरित्र के साथ जोड़कर दिया है। तीन लक्षण तुलसीदास ने बताये। जल स्वच्छ होना चाहिए। जल शीतल होना चाहिए और जल मधुर होना चाहिए। कई चरित्र विश्व में स्वच्छ आये लेकिन उग्र भी है। कई चरित्र पुराणों में शीतल आये लेकिन थोड़े स्वच्छ नहीं दिखते। कई चरित्र पुराणों में आये जो स्वच्छ भी है और शीतल भी है लेकिन उनमें माधुर्य नहीं है। राम और सीता के चरित्रों में तीनों है। वे स्वच्छ भी है, शीतल भी है और मधुर भी है। तुलसीदासजी कहते हैं, भगवान राम और सीता का सगुण चरित्र जो है वो एक ऐसी पवित्रता और एक ऐसी चारित्र्यिक स्वच्छता है कि हमारे मल का नाश करता है। परमात्मा का चरित्र मधुर भी है और अगाध है। जल की गहराईयां भी होती है। चरित्र का चौथा लक्षण तुलसी बताते हैं, जो बहुत गहरा है। और भगवान राम और सीता का चरित्र सुधासम है, अमृतमय है, तत्त्वमय है। 'रामचरित मानस' पांचों से परिपूरित है इसलिए उसकी महिमा है।

तो 'मानस-गोदावरी', इस कथा का जो केन्द्रबिंदु है। कोई भी नदी हो उसके पांच लक्षण होते हैं और गोदावरी के भी पांच लक्षण है। रामकथा सरिता है। ये प्रमाण वाल्मीकि वचन-

जिन्ह के श्रवन समुद्र समाना ।
कथा तुम्हारि सुभग सरि नाना ।।

कहते हैं, आप की कथा ये बस सुंदर नदियां ही नदियां है। प्रवाह ही प्रवाह है। राम प्रवाहमय है। रामतत्त्व प्रवाहमय है। रामकथा भी एक प्रवाह है। इसको कोई बांध नहीं सकता। नदी के जो पांच लक्षण है वो कथा में दिखते हैं और गोदावरी में भी दिखते हैं। पहला लक्षण, नदी उसको कहते हैं जो प्रवाहमान हो, जो गतिशील हो। जो बंधियार हो जाय वो नदी नहीं है, जलाशय है। भगवान राम को प्रवाहमान नदियां बहुत प्रिय है। इसलिए जनम लिया सरजू के तट पर। नदियां मानी प्रवाहमय बातें ठाकुर को पसंद है। राम वन में गए तो पहली रात्रि मुकाम तमसा के तट पर किया। भगवान राम शृंगबेरपुर गये जहां प्रभु ने उदासीन व्रत धारण कर लिया वो भी बहती गंगा है। कोई जलाशय नहीं है। फ़िर यात्रा करते-करते बीच में यमुनाजी का भी भगवान ने दर्शन किया। और ऐसे यात्रा करते-करते कोई प्रवाहमान वस्तु देखते हैं तो ऋषि-मुनिओं से भगवान जिज्ञासा भी करते हैं कि ये ज्ञान का प्रवाह है, भक्ति का प्रवाह है कि कर्म का प्रवाह है? भगवान हमारे लिए तुरंत जिज्ञासा करते हैं। जैसे विश्वामित्र के संग गये तो गंगा को देखकर जिज्ञासा की ये कौन नदी है? ये प्रवाह क्या है? वाल्मीकिजी के पास गये तो वाल्मीकि ने कहा, आप चित्रकूट जाईये। वहां भी मंदाकिनी बह रही है। और यहां जो प्रसंग चुना गया है उसकी जो पूर्व भूमिका है, यही है कि सुतीक्ष्ण नामक प्रेमी भक्त प्रभु की प्रतीक्षा में डूबा था, नाचता रहता था, रोता रहता था। और भगवान राम-लखन-जानकी आ गये। और फ़िर सुतीक्ष्ण से मिलकर भगवान कुंभज के पास यात्रा के लिए निकलते हैं तो सुतीक्ष्ण राम के संग जुड़ जाता है। कुंभज के आश्रम में प्रभु जाते हैं। कुंभज ने स्तुति भी की, मांग भी की। सबकुछ हुआ। जब भगवान ने कहा, कोई मंत्र दो, मेरा जो अवतारकार्य करने के लिए आया हूं वो शुरू करूं। तो कुंभज ऋषि कहते हैं महाराज, आप के बारे में मुझे पूरा परिचय है। फ़िर प्रभु की जिज्ञासा के कारण वो कहते हैं-

हे प्रभु परह मनोहर ठाऊँ ।
पावन पंचबटी तेहि नाऊँ ।।
दंडक बन पुनीत प्रभु करहू ।
उग्र साप मुनिबर कर हरहू ।।

कुंभज ऋषि कहते हैं, प्रभु, एक बहुत सुंदर जगह मैं आप को दिखाउं ये परम मनोहर है। जिसका नाम पंचवटी है। याद रखना, कथा वहीं होती है जहां परमात्मा ने कहीं न कहीं किसी न किसी रूप में कदम रखे हैं। तो ये पावन प्रदेश है यद्यपि थोड़ा श्रापित हुआ। दंडक वन गया था इसलिए प्रभु, आप नासिक में पंचवटी में गोदावरी के तट पर निवास करो। महात्माओं का जो बहुत उग्र शाप मिला है इस भू भाग को, शाप को हरण कर लो। मुनिओं की आज्ञा मानकर भगवान चल देते हैं। गोदावरी के तट पर प्रभु आये। परमात्मा प्रवाहमान है। प्रवाह उसको प्रिय है।

दूसरा लक्षण, इस प्रवाह को किसीकी खोज है। वो किसीकी खोज में है। नदी किसीकी खोज करती हैं।

सरिता जल जलनिधि महुँ जाई ।
होइ अचल जिमि जिव हरि पाई ।।

कहते हैं, नदी का लक्ष्य समुद्र। लेकिन मैं तलगाजरडा की नदी रूपावा को पूछुं, मेरी गांव की नदी को पूछुं तो वो मुझे ये बताती है कि मैं सागर को मिलने के लिए नहीं दौड़ती हूं। तो बता, मैं तुझ में नहाया हूं। तुझे चौपाईयां भी सुनाई है। तो तू तो कुछ बोल! तो बोली, बापू, मैं समुद्र को मिलने के लिए नहीं दौड़ती! खारे को कौन

मिले? तो फ़िर तू दौड़ती क्यों है? तो उसने कहा, दौड़ना ही मेरा जीवन है। बहना ही मेरा जीवन है। तो, मुझे तो कभी-कभी ये भी लगता है कि नदी का कोई लक्ष्य नहीं। बहना, चलना मेरा काम। सरिता जरूर चाहती होगी सागर को मिलने लेकिन रूपावा ने मुझे कहा, बहना है, बस।

तो, नदी का पहला लक्षण है प्रवाहमान रहना, गतिशील रहना। दूसरा लक्षण है, उसको किसीकी खोज है। चलो, ये पक्ष मान लिया जो दृष्टिगोचर होता है कि समंदर जाने के बाद शांत हो जाती है। मेरे भाई-बहन, प्रवाहमान जीवन को गोदावरी के समान जीवन को यदि कोई लक्ष्य प्रवाह को ले जाना है तो एक काम करना और वो ये कि कोई भी प्रवाह आगे तभी प्रवाहित होता है, बीच में आये गड्ढें को पहले भर दे। जिसको परम को पाना है उसकी यात्रा में बीच में कोई अभावग्रस्त, कोई दलित, कोई हीन जो गड्ढें है, उसे भर दो। पानी का स्वभाव है पहले उसको भरो। उसके बिना आप की यात्रा ही असंभव है। गड्ढें भरने के बाद ही उसकी गति आगे होती है। तो खोजवाला लक्षण हम मान ले तो बीच में आये गड्ढें को भरते जाना। वो ही मंझिल तक पहुंचता है।

तीसरा, गोदावरी या किसी भी नदी का तीसरा लक्षण है किनारे निर्मित करना। रामकथा रूपी गंगा बहती है तो लोक को भी छूती है और वेद को भी छूती है। वेदों को छूना और लोगों को अस्पृश्य मानना, वो तो आप प्रवाहमान नहीं बंधियार हो! लोक-वेद दो प्रवाह, दो कुल तैयार करता है। ये प्रवाहमान व्यक्ति कर सकते हैं। याद रखना मेरे भाई-बहन, समुद्र प्रवाहमान नहीं है, अचल है। इसमें गति नहीं है, कोलाहल है। सुनामी बनकर आ जाय तो विकृति है, वो स्वभावगत नहीं है। लेकिन छोटी-सी भी गति है वो दो किनारे निश्चित कर देती है।

चौथा लक्षण प्रवाह का है, जितने तीर पर ये प्रवाह बहिर् रूप में या अंतर्गत रूप में पहुंचे इनको हरियाला कर देना, उसको खूबसूरत बना देना। सब को हरा-भरा कर देना। रामकथा क्या करती है? हम को हरा-भरा कर देती है, आंतरिक रूप से, बहिर् रूप से। मैं कई लोगों को पहले भी जानता था, जो कथा से पहले हरे-भरे नहीं देखे। कथा के बाद हरे-भरे दिखाई देते हैं, क्योंकि अंदर से प्रवाह छूआ है या तो बहिर् से। आप अपने को भी पूछो कि आप हरे-भरे हुए हैं? पहले इतना आनंद आता था कभी? कोई भी बड़ाई है वो हरिनाम की बड़ाई है। प्रवाह का लक्षण है आंतर्-बाह्य जहां तक उनकी पहुंच हो हरियाली फैला दे। और प्रवाह चाहता है, उसकी पांचवीं मांग नहीं लेकिन पांचवीं उसकी एक प्रकृति है कि कोई भी नदी का प्रवाह चाहता है, मेरे तट पर आकर कोई सच्चा संत-साधु डूबकी लगा दे। संत लोग तीर्थों का तीर्थपना रिचार्ज कर देते हैं। ये नियम है। उसको महिमावंत बना देते हैं।

तो गोदावरी या तो कोई भी नदी इसलिए बह रही है कि प्रवाहमान होना उसका स्वभाव है; किसीकी तलाश अथवा तो बहते रहना उसका स्वभाव है। किसी को अस्पृश्य और किसी को महानता नहीं देना। दोनों को समादर करते हुए बहना उसका लक्षण है। और आंतर्-बाह्य हरा-भरा करना वो गोदावरी का स्वभाव है। और पांचवां कि कोई आकर हम में डूबकी लगाये। इतने साधु-संत, इतने शाही स्नान होगा। तो महात्मा लोग सब आनंद से नहाते हैं। जैसे आनंद से डूबकी लगाये, आनंद से जयजयकार करते जाये। आप कथा में नव दिवस ऐसा नहाकर जाईयेगा कि घर जाओ तो घर को लगे कि स्वयं गोदावरी लेकर आ गया!

तो, इस परम मनोहर भूमि जहां गोदावरी बह रही है, जहां प्रभु ने निवास किया है इसी भूमि पर पांच प्रसंगों का प्रगटीकरण हुआ है। एक बार इस गोदावरी के तट पर भगवान सुख से बिराजमान थे और लक्ष्मणजी को लगा कि आज बहुत सुख से ठाकुर बैठे हैं तो जाकर

छलमुक्त बचन कहते हैं। क्या लक्ष्मणजी छलमय बचन बोलते होंगे? और आज वो छलहीना बोले? जीव के आचार्य लक्ष्मणजी कभी छल से बोले? कोई परमतत्त्व के सामने परमाचार्य जब अपनी बात रखने जाय तो छलमुक्त ही बोलेगा। लक्ष्मण जैसा जाग्रत व्यक्ति कभी छलयुक्त बोलेगा ही नहीं। इसका मतलब ऐसा एक अर्थ में किया जाय कि कभी-कभी आदमी कोई परम व्यक्ति मिल जाय, प्रसन्न है, सुखासन में है तो हमारे मन में जो भी जिज्ञासा हो उसकी पूर्ति हो जायेगी इसलिए कुछ कहने के लिए तैयार हो जाते हैं। कभी-कभी लोग जिज्ञासा रखते आते हैं तब छल हीन नहीं होते! वो जानने के लिए नहीं आते, मापने के लिए आते हैं! मेरे पास कई लोग आते हैं। अपने गुरु की बात पेश करते हैं। उसने गुरु ने जो कहा है और वो ही बात ठान ली है और उसके अनुकूल यदि मेरा जवाब होगा तो बहुत राजी होंगे और मेरे अनुभव, मेरी सोच में यदि उसके विपरीत कोई जवाब आयेगा तो उसी क्षण उसको बुखार आया सा'ब! तो लोग अपनी बात को पक्का करने के लिए पूछते हैं! अथवा तो मजाक के लिए व्यंगात्मक पूछते हैं!

बाप, किसी बुद्धपुरुष के पास यदि कुछ कहना तो लक्ष्मणजी हम जीवों के आचार्य होने के नाते बता रहे हैं, लक्ष्मण छलयुक्त कभी है ही नहीं। जाग्रत महापुरुष है। हमें सीखावन देते हैं कि विनय से मन में जरा भी कटूता लाये बिना ऐसे पूछे। तो लक्ष्मणजी ने छलयुक्त कुछ बचन कहे। और रामजी के सामने पांच प्रश्न पूछे हैं। वैराग्य क्या? ज्ञान की व्याख्या पूछी। भक्ति क्या है? माया क्या है? जीव-ईश्वर में भेद क्या है? ऐसे पांच प्रश्न पंचवटी में पूछे हैं। और मेरे भाई-बहन, ये पांच तत्त्वों का शरीर ही पंचवटी है। उसमें गोदावरी बहती है और इस गोदावरी के तट पर राम मेहसूस हो जाय तो जीवाचार्य पूछते हैं वैसे भीतरी जीव को भी परमात्मा को पूछना चाहिए कि हमारी जीवन की पंचवटी में ये पांच सूत्र हमारी समझ में आ जाय। और ऐसे आदमी को पूछना जो थोड़े में सब कुछ समझा दे। भगवान राम ने कहा है, तेरे पांच प्रश्नों का उत्तर मैं थोड़े में समझा दूं। लेकिन मन, बुद्धि और चित्त से सुनना। मन से मानी विचारपूर्वक सुनना। बुद्धि से मानी निर्णायक तबक्के पर पहुंचना और चित्त से सुनना मानी उसको पक्का ग्रहण कर लेना। पूरे अंत:करण से मत सुनना क्योंकि उसमें अहंकार भी है। अहंकार से कभी सुनना मत। पहला प्रश्न, माया मानी क्या?

मैं अरु मोर तोर तैं माया ।
जेहिं बस कीन्हे जीव निकाया ।।

केवल छ: शब्द का उपयोग किया प्रभु ने मायातत्त्व को समझाने में। हे लक्ष्मण, माया मानी ये मैं हूं और ये मेरा है। ये तू है और ये तेरा है, इसीको भगवान राम ने माया कह दिया। मैं मिट जाय, मेरा मिट जाय। तू और तेरा का भेद छूट जाय। उसी क्षण जीव मायामुक्त। हम जैसे लोग तो मैं और तू और मेरा और तेरा में ही चलते रहते हैं। उदारतावश प्रभु ने कहा लक्ष्मण, माया के दो भेद है। माया दो प्रकार की है। एक विद्या और दूसरी अविद्या। विद्या नाम की माया जिसको लागू होती है वो भगवद् कृपा से बच जाता है और अविद्या नाम की माया जिसको बश में लेती है वो भवकूप में डूब जाते हैं। दूसरा प्रश्न, ज्ञान क्या है?

ग्यान मान जहँ एकउ नाहीं ।
देखत ब्रह्म समान सब माहीं ।।

ज्ञान मानी इतना ही कि जहां अभिमान नहीं है। सब में ब्रह्म का अनुभव करे, अभिमान न करे उसका नाम ज्ञान है। सब कुछ लेकिन जरा भी अहंकार नहीं है और सब में हरिदर्शन दिखाई दे। मेरे भाई-बहन, ज्ञान का अहंकार भवबंधन में डालता है। भले शास्त्र न आता हो, बोलना न आता हो, भाषा का कोई वैभव ना हो लेकिन अभिमान न हो, अहंकार न हो। अगला प्रश्न, वैरागी कौन है?

कहिअ तात सो परम बिरागी ।
तृन सम सिद्धि तीनि गुन त्यागी ।।

हे लक्ष्मण, मेरी दृष्टि में वो परम वैरागी है, तीनों गुण सत्त्व, रज, तम और तमाम सिद्धियां साधना के द्वारा प्राप्त की गई हो उसको तिनके के समान जो छोड़ देता है। छोड़नेवालों को पता भी नहीं रहता है कि मैंने कुछ छोड़ा है। इसी अवस्था को रामजी ने परम वैराग कहा है। मानवी चंचल है। चांचल्य हमारा स्वभाव है। कोई खेत में या लोन में बैठकर तिनका तोड़ता है और फेंक देता है। किसीने घर पे जाकर कहा कि मैंने तिनका तोड़कर फेंक दिया? वो भूल जाता है। उसी तरह सब सिद्धियां जिसकी छूट जाय कि स्मरण भी न रहे कि मैंने सिद्धियां छोड़ी है इसी तरह सत्त्व, तम और रजोगुण छूट जाय और साधक को पता भी न चले कि मैंने छोड़ा है। तुलसीजी उसको परम वैरागी कहते हैं। तीन वस्तुओं को न जाने लक्ष्मण, उसको जीव मानना। मैं कौन हूं वो न जाने, जीवपना न जाने, जगत क्या है, और जगदीश क्या है? इन तीनों की जिसके पास जानकारी नहीं है उसका नाम जीव है और कर्मानुसार कभी बंधन में भी मुक्ति में डाला करता है वो परम सत्ता का नाम शिव है। और ये क्रिया करने के बाद भी सब से परे जो सत्ता है, माया को प्रेरित करती है ये सत्ता उसको शिव कहते हैं। और फ़िर भक्ति के साधनों की चर्चा करते ऐसे पांच प्रश्न पंचवटी में पूछे गये। दूसरा प्रसंग गोदावरी तट पर शूर्पणखावाला प्रसंग।

कथा में कल हनुमानजी की वंदना, फ़िर सीता-रामजी की वंदना, उसके बाद क्रम में तुलसी ने रामनाम की वंदना की। रामनाम का महिमागान किया। 'राम' शब्द प्रणवरूप-ॐकार रूप है। आप केवल 'राम' बोलो तो ॐकार का जाप हो गया। उसमें प्रणव आ गया। केवल नाम लिखनेवालों को गणेशजी को परम पूज्यपद प्राप्त हो गया। वाल्मीकि 'मरा', 'मरा' बोलते थे, उलटा जाप करते थे और वो शुद्ध हो गये। राम महामंत्र से शिव ने कालकूट नामक विष को पी लिया और विष और राम मिलते ही शिव को विश्राम का अनुभव हुआ। त्रेतायुग में रामजी ने लीला में जो जो किया वो कलियुग में रामनाम से होता है। नाम चारों युग में मौजूद है। कलियुग में नाम की अपरंपार अद्‌भुत महिमा है।

नहीं कलि करम न भगति बिबेकू।
रामनाम अवलंबन एकू।।

कलियुग का प्रधान साधन परम तत्त्व को प्राप्त करने केवल-केवल हरिनाम है। रामनाम अति उदार, पुराण और वेदों का निचौड़ हरिनाम है। नाम-साधना बहुत सरल है। विनोबाजी ने भी नाम पर बहुत बल दिया है। प्रभु के नाम का स्मरण करना कलियुग में प्रधान है।

रामकथा क्या करती है? हम को हरा-भरा कर देती है, आंतरिक रूप से, बहिर् रूप से। मैं कई लोगों को पहले भी जानता था, जो कथा से पहले हरे-भरे नहीं देखे। आप अपने को भी पूछो कि आप हरे-भरे हुए हैं? पहले इतना आनंद आता था कभी? कोई भी बड़ाई है वो हरिनाम की बड़ाई है। तो गोदावरी या तो कोई भी नदी इसलिए बह रही है कि प्रवाहमान होना उसका स्वभाव है; किसीकी तलाश अथवा तो बहते रहना उसका स्वभाव है। किसी को अस्पृश्य न समझना और किसी को महानता नहीं देना। दोनों को समादर करते हुए बहना उसका लक्षण है। और आंतर्-बाह्य हरा-भरा करना वो गोदावरी का स्वभाव है। और पांचवां कि कोई आकर हम में डूबकी लगाये।

मानस-गोदावरी : ३

परमात्मा की कामना फल के रूप में मत करना, रस के रूप में करना

इस पावनतीर्थ में पावन कुंभ अवसर पर गाई जा रही इस रामकथा में 'मानस-गोदावरी' का विषय करके कुछ बातें हो रही है। कल सायंकाल होल में कार्यक्रम हुआ, जिसमें ओसमान और नानो वडेरो इन दोनों ने जो प्रस्तुति की, खुश रहो बाप! आज एक विशेष प्रसन्नता की बात है कि भगवद्कृपा से गाई जा रही रामकथा के सार को हमारे विनयशील नीतिनभाई संपादित करते हैं उसकी पूरी स्वान्तः सुखाय कार्य करनेवाली टीम के साथ। उसमें आज सिंहस्थ में मेडता में गाई गई रामकथा 'मानस-मीरां' भाग-२ जो प्रसाद के रूप में लोकार्पित हुई ये पुस्तिका उसके लिए मैं मेरी भूरीशः प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। और इसमें केवल हेत के कारण लगे सभी पूरी टीम को व्यासपीठ से साधुवाद देता हूं। हरवक्त नीतिनभाई उसका खुलासा कर ही देते हैं कि ये कथा का सार प्रसाद के रूप में बांटा जाता है। कोई कहीं से भी प्रसाद के रूप में ज्यादा कोपियां प्राप्त करके उसका दुरुपयोग न करे ऐसी प्रार्थना।

गुजराती में एक जिज्ञासा है, बापू, कल एक प्रश्न के उत्तर में आपने कहा कि लक्ष्यमुक्त जीवन होना चाहिए। लेकिन विवेकानंदजी का जगविख्यात सूत्र है, 'उत्तिष्ठित जागृत प्राप्य वरान्निबोधत।' उपनिषद का सूत्र जो विनोबाजी ने अपने जीवन का एक सूत्र बना दिया था कि उठो, जागो और लक्ष्य की प्राप्ति करो। तो, कल जो कहा गया कि परमात्मा की प्राप्ति की भी कामना नहीं होनी चाहिए। ऐसा मेरा कल का वक्तव्य था। इसके बारे में दो-तीन श्रावक

भाई-बहनों का एक ही प्रकार का प्रश्न है कि परमात्मा की प्राप्ति की भी कामना न की जाय? ये कुछ समझ में नहीं आता है। विवेकानंदजी तो लक्षप्राप्ति के लिए कहते हैं कि कैसे भी लक्ष्य की प्राप्ति करो। लेकिन ये उपनिषद का सूत्र है, ये विवेकानंदजी ने अपनाया हुआ जीवन सूत्र है, अद्भुत है। लेकिन मैंने कल आपसे कहा कि नदी किसी की खोज में है, सागर उसका लक्ष्य है, वो तो हमारा निवेदन है। नदी से तो पूछो कि तू सागर मिलने के लिए दोड़ रही है कि दौड़ना ही तेरा परमआनंद है? इसलिए बाप, मेरा व्यक्तिगत विचार आपके सामने पेश किया कि मेरा कोई लक्ष्य नहीं है। परमात्मा भी नहीं। क्योंकि परमात्मा तत्त्वतः हम है। कौन परमात्मा नहीं है? तत्त्वतः तो सब परमात्मा है। यदि सब परमात्मा नहीं होते तो मेरे देश के उपनिषद 'अहं ब्रह्मास्मि' का सूत्रपात नहीं करते। और गोस्वामीजी ने भी यही सूत्रपात को प्रसाद के रूप में ग्रहण किया।

सोहमस्मि इति बृत्ति अखंडा।
दीप सिखा सोइ परम प्रचंडा।।

सोहम् की बात तुलसी ने भी कही। तो, जिसकी खोज हम करने जाते हैं वो तत्त्वतः तो हम ही है। विचारकों ने जिन्होंने अनुभव किया है उसी बुद्धपुरुषों ने कहा है कि जहां से हम खोज शुरू करते हैं वो तत्त्व ओलरेडी वहां विद्यमान होता है। इसलिए मेरी व्यासपीठ यानी मेरे निजी विचार है कि कोई लक्ष्य नहीं। और मैं आपसे ये भी निवेदन करूं कि फल के रूप में कोई महत्त्वाकांक्षा न रखो। ईश्वर यदि आपकी दृष्टि में फल है तो प्लीज़, छोड़ो ईश्वर की कामना। जंजीर सोने की हो या लोहे की हो, क्या फ़र्क पड़ता है? परम को पाना है? जानो बुद्धपुरुषों की आंखों में।

भरी इन निगाहों में महोब्बत ही महोब्बत है।
जिसे चाहिए जितनी वो ले ले उनकी आंखों से।

- राज कौशिक

ये गाजियाबादी शे'र है। किसकी प्राप्ति करनी है? कौन दूर है? ओसमान वो भैरवी गाता है और इस शायरी जिस भैरवी गाई गई तत्त्वतः तो उपनिषदी सूत्र है-

ना कहीं से दूर हे मंज़िलें।
ना कोई करीब की बात है।

एक ओर तो कहा गया, परमात्मा दूर से दूर है। दूसरी तरफ़ बुद्धपुरुषों ने महसूस किया कि इससे अतिरिक्त निकट कोई नहीं, क्योंकि ये हम है।

तो, ये मेरा व्यक्तिगत विचार है बाप, मेरी कोई कामना नहीं कि भगवान का दर्शन। फल के रूप में किसी भी चीज की कामना मत करो। हां, मेरे 'मानस' के साथ और जिस तरह मैं आपके सामने पेश होऊं निवेदन करूं उसके साथ यदि आपकी सहमती है तो फल की कामना मत करो, रस की कामना जरूर करो। क्योंकि ईश्वर फल नहीं है, रस है। यदि ईश्वर रस नहीं है तो 'रसो वै सः।' ये श्रुति वचन नहीं आता। मेरी बात मानकर आप अधकच्चे निर्णय मत करना, प्लीज़। मैं आपसे निवेदन करूं कि भरतजी निष्काम है कि सकाम है? भरत का जो मार्ग है वो किसी लक्ष्यप्राप्ति का है कि लक्ष्यविहीन है? आपकी क्या राय है? लक्ष्यविहीन है? पंडितजी ने कहा कि भरतजी निष्काम है, क्योंकि भरतजी ने त्रिवेणी स्तुति करते हुए तीर्थराज प्रयाग में एक मांग की है। आप 'मानस' के साधक हैं तो जानते हैं।

अरथ न धरम न काम रुचि गति न चहउँ निरबान।
जनम जनम रति राम पद यह बरदानु न आन।।

लेकिन क्या ये निष्कामता का प्रमाणपत्र है? कोई कहे, मैं दिन में नहीं खाता, लेकिन रात में खाये तो? भरत निष्काम है, लेकिन तुरंत कहते हैं, 'जनम जनम रति राम पद।' एक मांग उठी तुरंत। मुझे जनम-जनम राम के चरण में रति प्राप्त हो। तो, ये निष्काम हो कि सकाम हो? श्री भरतजी कहते हैं, मुझे धर्म, अर्थ, काम नहीं चाहिए; इवन मोक्ष नहीं चाहिए। लेकिन जनम-जनम

राम के चरण में रति चाहिए। यही वरदान मुझे दो। हे त्रिवेणी, इसके अतिरिक्त कोई वरदान मुझे नहीं चाहिए। तो ये तो मांग हो गई।

शास्त्र कहता है, हमारे में छः तरंग होते हैं। इसको ऊर्मियां भी कहते हैं। छः ऊर्मियां। प्रत्येक देहधारी व्यक्ति में ये छः तरंग उठते हैं। ये निर्विवाद है। इसमें प्राण के दो तरंग, मन के दो तरंग और शरीर के दो तरंग मिलकर छः तरंग होते हैं। प्राण के दो तरंग होते हैं भूख और प्यास। ये पूरा करना चाहिए। ये प्राण की मांग है। यदि आप खाना नहीं खाये तो धीरे-धीरे प्राण कमजोर होता है और अन्न के अभाव में आदमी प्राणत्याग करता है। क्योंकि ये प्रकृतिगत प्राण की ये दो तरंगे है। हमारे शास्त्रों ने तो वहां तक कहा कि भोजन करो, लेकिन औषधि के रूप में। ये भोजन तुम्हारा भोग नहीं है, तुम्हारा स्वास्थ्य है। सम्यक् मात्रा में भोजन ये कुछ बुरी बात नहीं है, और इनमें भी प्रसाद।

कठिन तपस्या ये कलियुग की प्रकृति नहीं है। प्रेमसाध्य परमात्मा होना चाहिए, तपसाध्य परमात्मा नहीं होना चाहिए। और मेरे तुलसी ने हमें बल दिया है।

हरि व्यापक सर्वत्र समाना।
प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना।।

तुलसी का परमतत्त्व तो प्रेम से प्रकट होता है, जिसने परमतत्त्व को प्रेम का व्रत कर लिया। 'प्रेम' शब्द बहुत समझकर यूझ कर रहा हूं। उसका गलत अर्थ मत करना। राज कौशिक का शे'र है-

सिर्फ़ तेरे चेहरे पर ही नहीं मरते।
हमें तेरे कदमों से भी महोब्बत है।

●

जाउं कहां तजि चरन तुम्हारे।

हम तो चरणसेवी है। तो, प्रेम वो प्रेम जिसको तुलसी ने जीया; मीरां ने नाचकर जीया; चैतन्य ने आंसू में उसको पिरोया। कबीर ने अपनी साधुकडी बोली में उस प्रेम को प्रस्तुत किया है। ढाई आखर -

राम हि केवल प्रेमु पिआरा।
जानि लेउ जो जाननिहारा।।

अभी-अभी 'मानस-मीरां' का एक निवेदन पढ़ा, अच्छा कहा नीतिनभाई ने कि मीरां पांच प्रकार की दीवानी थी। इनमें मीरां का रूप दीवानापन है। मीरां प्रेम-दीवानी है। मीरां दर्द-दीवानी है। मीरां नाम-दीवानी है। मीरां संत-दीवानी थी। मीरां में पांच प्रकार की दीवानगी है। लोगों को तपस्वी होना है, प्रेमी नहीं होना है! प्रेम स्वयं तप है। प्रेम स्वयं तपस्या है। किसको तपस्या कहते हैं? अन्न के त्याग को? आपने देखा है, जो खाना छोड़ देते हैं वो कभी मुस्कुरा नहीं सकते! चिड़चिड़े होते हैं! प्राण की तरंग है भूख-प्यास। हम उसको छोड़ नहीं सकते। सम्यक् कर सकते हैं। मेरा श्रोता भूखा रहे, मुझे अच्छा नहीं लगता। तुम्हारी भूख होनी चाहिए भजन की; चौपाई गाने की; हरिनाम की। सिमरन की भूख होनी चाहिए। ये प्राण के तरंग से कैसे मुक्त होंगे? फिर भी जो उपवास करे उसको मैं नमन करता हूं। आलोचना न करूं। तो, प्राण की दो तरंगें भूख और प्यास। मन की दो तरंगें, दो ऊर्मियां, जिसको कहते हैं शोक और मोह। मन है तो शोक होगा। मन है तो मोह होगा। यदि मन मिटा तो अतीत अनुसंधान गया, शोक गया। मन मिटा तो भविष्य का मोह मिटा। अथवा तो वर्तमान का मोह मिटा। लेकिन है ये तरंग। तो मन के तरंग से भी मुक्त होना कठिन।

तो, मन की तरंग है शोक-मोह। प्राण की तरंग भूख-प्यास और शरीर की तरंग है जन्म और मृत्यु। विश्व के किसी चिंतक ने इतनी ऊंचाई पर चिंतन नहीं किया जो मेरे देश का ऋषि करता है। शरीर तो है माँ-बाप के इसलिए हमारा जन्म हुआ। हमारा शरीर है यदि संसार में तो जन्म किसीका होगा। शरीर की तरंग है जन्म। और शरीर है तो दूसरी तरंग सापेक्ष है, मरण भी होगा। ये जुड़वे है। शंकराचार्य आदि गुरु शंकर कहते हैं, 'न मृत्युर्नशंका न मे जातिभेदः।' तो, पंडितजी आप कहीं महेमान हो और कोई आपसे पूछे कि आप भोजन क्या करेंगे तो आप कहेंगे कि मैं अन्न नहीं खाता। तो यजमान कहेगा, फल की व्यवस्था करे। तो कहे, मैं फल भी नहीं खाता। यजमान बेचारा सोचेगा कि करे क्या? यजमान परिवार चिंतित हो जायेगा। हम आपकी क्या सेवा करे? पूछेगा तो बोले, थोड़ा रस दे दो। मैं फल नहीं खाता। रस पीना आखिर क्या है? ये चालाकी है! क्योंकि फल में तो गुटका होता है। रस में छिलका निकल जाय। प्योर रस!

भरत वो ही रस मांग रहा है। मैं तुलसी के बल पर बोल रहा हूं। रति को तुलसी ने रस कहा है। धर्म फल है। प्रेम रस है। अर्थ फल है। अर्थ का सदुपयोग करने में जो रस आये वो रस है। शायद किसी को वैभव मिल जाय वो उनका फल हो सकता है। हमारे मुल्क में कोई-कोई धर्म में संगीत सुनना, बजाना, गाना मना क्यों है? क्योंकि संगीत की नब्बे प्रतिशत विद्या ये आदमी की कामऊर्जा के नीचे ले जाती है। इसलिए थोड़े डरे हुए लोगों ने कहा, हम उसका इस्तेमाल नहीं करेंगे। क्योंकि हमारी ऊर्जा नीचे जाती है। लेकिन संगीत की दश प्रतिशत ऊर्जा ऐसी है, कोई ठीक से गाये और शांति से सुने तो ये ऊर्जा आदमी को काम नहीं, राम तक पहुंचा दे। कोई गाये तो हम झुम उठते हैं, समझना ऊर्जा उपर उठी। मेरे भाई-बहन, फल की आकांक्षा छोड़ो। हरि फल नहीं होना चाहिए। हरि रस है। और तुलसी ने रति को रस कहा है।

सम जम नियम फूल फल ग्यान।
हरि पद रति रस बेद बखाना।।

सम जम फूल ये नियम है। तुलसी कहते हैं, छोटे-बड़े ब्रत-नियम ये फूल है, लेकिन फल ज्ञान है। आम फल है, लेकिन कच्चा हो तो? ज्ञान फल है, लेकिन कच्चा हो तो? बौद्धिकता फल है, लेकिन कच्ची हो तो? चटनी हो सकती है, लेकिन आमरस नहीं बनता। रस तो जब ज्ञान पक जाय तब आता है। लक्ष्य फल के रूप में ना हो। भले चतुराई मानी गई, लेकिन रस की मांग करनेवाले ने पा लिया। हमारा नरसिंह महेता गाता है -

प्रेमरस पाने तुं मोरना पिच्छधर,
तत्त्वनुं टूंपणुं तुच्छ लागे।

तो, मेरा कल का निवेदन कि परमात्मा को भी पाना नहीं, क्योंकि पाना है ही नहीं। जिसको पाने के लिए निकले हैं वो ओलरेडी है। सदा-सदा है। सदा रहेगा। रामकथा क्या है? रस है। आरती में क्या लिखा है?

गावत बेद पुरान अष्टदस।
छओ सास्त्र सब ग्रंथन को रस।

मैं कथा गाउं इस रस की तो बात मेरे पास है, इसको मैं नहीं छोड़ सकता। यही तो जीवन है। आप क्यों सुन रहे हो? क्या मोक्ष मिल जायेगा? क्या है मोक्ष? मोक्ष हरिकथा में है। कोई भी कथा हम सब को कवर करती है। मैं तो स्वर्ग का विरोध करता हूं। स्वर्ग की

फल के रूप में किसी भी चीज की कामना मत करो। फल की कामना मत करो, रस की कामना जरूर करो। क्योंकि ईश्वर फल नहीं है, रस है। यदि ईश्वर रस नहीं है तो 'रसो वै सः।' ये श्रुति-वचन नहीं आता। धर्म फल है। प्रेम रस है। अर्थ फल है। अर्थ का सदुपयोग करने में जो रस आये वो रस है। फल की आकांक्षा छोड़ो। हरि फल नहीं होना चाहिए। हरि रस है। आम फल है, लेकिन कच्चा हो तो? ज्ञान फल है, लेकिन कच्चा हो तो? बौद्धिकता फल है, लेकिन कच्ची हो तो? चटनी हो सकती है, लेकिन आमरस नहीं बनता। रस तो जब ज्ञान पक जाय तब आता है। लक्ष्य फल के रूप में ना हो।

कामना नहीं है। स्वर्ग है कि नहीं मेरे लिए प्रश्नार्थ है! कौन स्वर्ग? किसी पहुंचे हुए बुद्धपुरुष के संग सांस ले लो यही स्वर्ग है। किसी परमतत्त्व के पास किसी वृक्ष के नीचे बैठकर चार घंटा बैठ लिया तो इस वृक्ष के पते को पानखर नहीं आती साहब! इन्सान क्यों नहीं संवरेगा? कौन स्वर्ग? स्वर्ग तो स्वल्प है। हम रस के उपासक है। रामरस; नरसिंह मेहता गाता है -

रामसभामां अमे रमवाने ग्या'ता,
पसली भरीने रस पीधो रे ...

नरसिंह नरसिंह है। तुलसी तुलसी है। लेकिन कालगणना में नरसिंह सिनियर है। नरसिंह को छः सौ साल हुए। तुलसी को अभी पांच सौ साल हुए है। इसलिए 'वैष्णवजन' के जितने सूत्र है, तुलसी की चौपाई में है। 'सभी सयाने एक मत' साहब! 'पीड पराई जाणे रे।' एक-एक सूत्र वैष्णवजन का लो। अठारह पूरे तुलसी की पंक्तियों में है क्योंकि तुलसी बाद में आये। यद्यपि तुलसी तुलसी है लेकिन नरसिंह एटले नरसिंह!

हरिना जन तो मुक्ति न मागे,
मागे जनमोजनम अवतार रे;
नित्य सेवा, नित्य कीर्तन-ओच्छव
निरखवा नंदकुमार रे.

जिसको भक्ति करनी है उसको सब आदेश मानने की जरूरत भी नहीं है। और सच्चा बुद्धपुरुष आदेश देगा भी नहीं। मैं आपसे पूछुं कि सीताजी ने राम का आदेश माना था? ये गोदावरी के तट की पंचवटी की कथा है। रामजी ने कहा, जानकीजी, मैं ललित नरलीला करने जा रहा हूं। आप मुझे सहयोग करे। रावण आयेगा। मुझे लीला करनी है। आपका अपहरण करेंगे। आपको जाना होगा। मैं सब योजना बनाऊं। एक ओर से चोर को प्रेरित करूंगा, एक ओर से पहेरेदार को भी प्रेरित करूंगा। जानकीजी ने कहा कि ठाकुर, किसको फुसल रहे हो? आपकी सुंदरता देखने के बाद जनक की बेटी को हिरन की सुंदरता नज़र आयेगी क्या? मैं इसमें सहयोग नहीं कर सकती। मैं भक्ति हूं। भक्ति स्वतंत्र है। ज्ञान-वैराग्य तो उसके आधीन होते हैं। मैं नहीं मानूंगी। लक्ष्मण, जिसने मेरी इतनी सेवा की, मैं उसको कटुवचन कहूं? सीताजी ने मना कर दिया, मैं आपसे बिछड़ कर रहूं? मैं मृग में

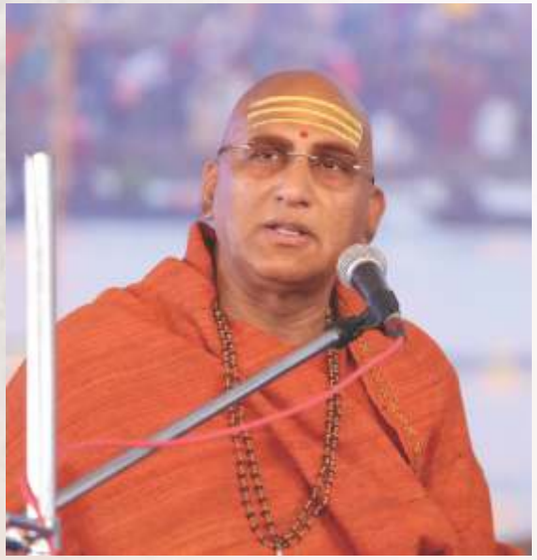

फंसू? मैं लक्ष्मण को कटु वचन कहूं? तो भगवान ने कहा, मुझे नाटक करना है। तो बोली, आप किसी ओर संदर्भ में कर लीजिए। तो भगवान ने कहा, जानकी, तुम नहीं करोगी तो चलो, मैं तेरे प्रतिबिंब से काम चला लूंगा। तुम्हारी छाया से मैं लीला कर लूंगा। और मैं तुम्हें खोजने निकलूंगा दंडकवन में। एक बार पुष्पवाटिका में तू खोजने निकली थी मुझे कि राम कहां है वाटिका में? दंडकवन में मैं खोजूंगा, 'सीते सीते सीते!' भक्ति स्वतंत्र है। भगवान राम ने जब चौथा प्रश्न भक्ति का आया तब कहा है कि-

भक्ति तात अनुपम सुख मूला।
मिलही जो संत होइ अनुकुला।

फिर भक्ति के साधन आदि-आदि चर्चा पंचवटी में पांच प्रश्नों में वो हुई है। कहने का मतलब फल के रूप में परमात्मा की कामना मत करना, रस के रूप में करना। और कौन स्वर्ग? कौन मोक्ष? यहां तो आनंद मिल रहा है। इससे ज्यादा रस कहां है?

प्रश्न है, 'बापू, हम सिमरन किसका करे?' सिमरन उसका करो जो आपको प्रिय हो। और जो आपको प्रिय हो उसका सिमरन करना नहीं पड़ता, हो जाता है। तुलसी राम का सिमरन करते हैं। व्रज की गोपी कृष्ण का करती है। जो आपको प्रिय लगे उसका करो। 'गोदावरी का अर्थ क्या है?' जो अपनी गोद में सबको आवरी ले उसका नाम गोदावरी है। अपने विशाल प्रवाह में, संकीर्ण प्रवाह नहीं। विशाल प्रवाह में सबको अपनी बाहों पसारके सबको आवरी ले, जिसकी गोद में सब समा जाय उसका नाम है गोदावरी।

सुरसरि सरसइ दिनकर कन्या।
मेकलसुता गोदावरि धन्या।।

सुबह में इस एक पंक्ति का स्मरण कर लो, पांचों नदियों में स्नान हो जायेगा। तो, तुलसी की इस पंक्ति कथा का केन्द्रबिंदु बनी है।

सुरसरि सरसइ दिनकर कन्या।
मेकलसुता गोदावरि धन्या।।
अनुज समेत गए प्रभु तहवाँ।
गोदावरि तट आश्रम जहवाँ।।

सुरसरि मानी गंगा। सरसइ मानी सरस्वती। बिलकुल देहाती शब्द का प्रयोग तुलसी ने किया है। दिनकर कन्या मानी यमुना, सूर्यपुत्री जमुनाजी, रवितनया। मेकलसुता, रेवा; फिर गोदावरी धन्या। तो ये धन्य विशेषण है। सब नदियों के लिए एक अर्थ में कि गंगा, यमुना, सरस्वती, मेकलसुता, गोदावरी ये सभी धन्य नदियां है। धन्य प्रवाह है। धन्य का भाष्यकारों ने जो अर्थ किया है वो है पुन्यशाली नदियां है। लेकिन उसका एक अर्थ ये भी होता है कि सुरसरि, सरसइ दिनकरकन्या, मेकलसुता, फिर गोदावरी के बाद 'धन्या' शब्द है। इसका मतलब, यहां गोदावरी केन्द्र में है तो कहने को जी करता है कि गोदावरी स्वयं धन्य है।

हम किसीका जय करते हैं। 'जय' बड़ा प्यारा नारा है। 'सत्यमेव जयते', लेकिन जिसकी जय हम करे वो कच्चा है तो उसमें अहंकार की कोंपले निकल सकती है कि मेरा जय हुआ, मेरा विजय हुआ! ठीक है, बड़ा प्यारा शब्द तो यह है कि किसी को आप ठीक से कहो, धन्य हो। 'जय हो' के बदले 'धन्य हो।' और तुलसीदासजी ने 'रामचरित मानस' में कौन-कौन धन्य है, उसका लिस्ट दिया है। यहां तो गोदावरी धन्य, सुरसरि धन्य, सरसइ धन्य, दिनकरकन्या धन्य है। मेकलसुता भी धन्य। सब पुन्यसलिला, सब धन्य है। लेकिन गोस्वामीजी लिस्ट देते हैं, कौन-कौन धन्य है?

धन्य धन्य गिरि राजकुमारी।
तुम्ह समान नहिं कोउ उपकारी।।

'मानस' के आरंभ में पार्वती के पूछे हुए प्रश्न के उत्तर में शिवजी जब बोले। पार्वती की जिज्ञासा पर

शिवजी पहला वाक्य बोले तब ये शब्द थे 'धन्य धन्य।' दो बार 'धन्य' शब्द। तीन बार बोल देते तो अच्छा हो जाता; त्रिसत्य हो जाता। 'बालकांड' के आरंभ में दो बार 'धन्य' शब्द है। 'उत्तरकांड' में कथा जब पूरी होने की करीब है तब तुलसीदासजी शिवजी के मुख से नौ बार 'धन्य' शब्द का प्रयोग करते हैं। बीच में भी 'धन्य' शब्द है। आखिर में बोले। बाबा ने किस किसको धन्य माना है? सबसे पहले कहा है, वो देश धन्य है जहां सुरसरि बहती है।

धन्य देस सो जहँ सुरसरी।
धन्य नारि पतिब्रत अनुसरी।

उस देश धन्य है, जहां गंगा बहती है। फिर कहे, वो नारी धन्य है जो पतिव्रता धर्म का अनुसरण करे। तुलसीदासजी धन्यवाद के लिस्ट में कहते हैं, वो राजा धन्य है जो नीति और न्याय से हटे नहीं। शिवजी कहते हैं, उमा, वो राजा धन्य है जो नीति से च्यूत नहीं होता। और वो ब्राह्मण, वो बुद्धपुरुष, वो ब्रह्म को जाननेवाला जिस का जनम सद्गुरु की कूख से हो चुका है ऐसा द्विज धन्य है, जो अपने धर्म को कभी छोड़ता नहीं। द्विज का शास्त्रोक्त धर्म तो यही माना गया है। यज्ञ करना, कराना। दान लेना, दान देना। विद्या प्राप्त करना, विद्या पढ़ाना। अपने इस मूल मंत्र को कभी छोड़े ना ऐसा द्विज धन्य है। आगे -

सो धन धन्य प्रथम गति जाकी।
धन्य पुन्य रत मति सोइ पाकी।

वो धन धन्य है, जिसकी पहली गति हो। तो, धनवान को, अर्थवान को तुलसीदासजी धन्यवाद के लिस्ट में लेते हैं। धन की तीन गति है। पहली गति दान, दूसरी भोग, तीसरी विनाश। प्रथम गति जो धन दान में जाय, दूसरों के शुभ में जाय वो धन्य है। इसलिए प्रामाणिकता से दसवां हिस्सा निकाला करो। जहां जरूरत हो वहां दसवां हिस्सा और किसीको पता भी न लगे ऐसे। अस्तित्व बहुत कृपालु है। तो, 'सो धन धन्य प्रथम गति जाकी।' और सो बुद्धि धन्य है जो पुन्यमयी होती हैं, वो बौद्धिकता धन्य है।

धन्य धरी सोइ जल सतसंगा।
धन्य जन्म द्विज भगति अभंगा।

वो पल, वो घडी, वो क्षण धन्य है जिस क्षण में किसी साधुपुरुष का संग हो जाय। और वो धन्य है जिसको द्विज के चरणों में अभंग भक्ति। द्विज मानी बुद्धपुरुष। जिसका दूसरा जनम हो चुका है ऐसा पहुंचा हुआ जागरूक महापुरुष, जिसके चरणों में जिसकी अभंग भक्ति हो। आखिर में शिवजी कहते हैं, हे पार्वती, वो पूरा कुल धन्यवाद के पात्र है, जिसमें कोई हरि भजनेवाला, कोई कुलीन बालक जन्मे। सत्य, प्रेम, करुणा से अपने जीवन को वो करनेवाला कोई सुपुनित जीव हो जाय इस कुल को धन्यवाद। तो नौ धन्यवाद यहां है।

गोदावरी धन्य है, क्योंकि गोदावरी भी उसी देश में बहती है जहां गंगा बहती है। माँ जानकी पतिव्रत धर्म को अनुसरण करनेवाली है इसलिए गोदावरी धन्य है। वो राजा धन्य है जो नीति न तोड़े। गोदावरी के तट पर जो राजा राम है, उसने कभी मर्यादा न तोड़ी। इसलिए गोदावरी धन्य है। कितने ऋषिमुनि दंडकारण्य में निवास कर रहे थे? उन्होंने कभी धर्म का त्याग न किया, धर्मरूप राम की प्रतीक्षा की। वो संपदा धन्य है जिसकी पहली गति दान में हो। और भगवान राम; गोदावरी के तट पर निर्वाण का धन प्रभु ने अधम खग को दिया। गोदावरी के तट पर घटना घटी। वो पुन्य से पकी हुई बुद्धि धन्य है मारीच की, उभय भांति मृत्यु देखा तो मति पक चुकी थी, पापी से मरने से अच्छा पुन्यपुरुष राम के हाथों मरूं। वो घटना भी गोदावरी के तट पर हुई। और इतना बड़ा सत्संग यह भूमि पर हुआ जहां गोदावरी के तट पर लक्ष्मण ने पांच प्रश्न पूछे। रामजी ने जिसका उत्तर दिया। इतना बड़ा सत्संग हुआ।

मानस-गोदावरी : ४

सबसे बड़ी साधना है गुरुवचननिष्ठा

'मानस-गोदावरी', जिसकी कुछ सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा हम वार्तालाप के रूप में कर रहे हैं। 'गोदावरी' शब्द के कई अर्थ होते हैं। शब्दकोश में भी, विधविध भाषा में भी। मैं एक ही बात आपके सामने रखना चाहता हूं। 'गो' का मतलब है हमारी इन्द्रिय। जिसको हम शास्त्र के आधार पर दस गिनते हैं। पांच ज्ञानेन्द्रिय, पांच कर्मेन्द्रिय और ग्यारहवां मन। जिसको संस्कृत भाषा में करण कहते हैं। करण मानी इन्द्रिय। तो 'गो' मानी इन्द्रिय। 'गो' बिलग करके 'दावरी' को बिगल करके अर्थ किया जाय तो बहुत से रहस्य का उद्घाटन हो जाता है। मराठी भाषा में भी दावरी के कुछ अर्थ है। देहातों में भी 'दावरी' शब्द का प्रयोग होता है। लेकिन बहुत एकमतवाला अर्थ है दावरी का वो है प्रकाश-किरण; एक उजाला; एक आलोक। और फिर सीधा-सा अर्थ बन जाता है, जो हमारी इन्द्रियों को प्रकाशित करे उसका नाम गोदावरी। हमारी इन्द्रियां अंधेरे में भटक रही है। हमारी नासिका को कुछ तमस्भरी गंध प्रिय लगती है। हमारे कर्णों को कुछ व्यंग, कुछ गंदे शब्द अच्छे लगते हैं। एक ग्रंथ का नाम है 'गौतम धर्मसूत्र।' मैंने बहुत पहले पढ़ा। उसमें एक सूत्र है, बड़ा प्यारा सूत्र है, 'अभद्रं भद्रं इति ब्रूयात्। अमंगल मंगलं इति ब्रूयात्।' अमंगल को भी मंगल के रूप में पेश करो। क्या काम किया है देश के ऋषि ने? ये विश्व, ये वसुधा कभी इनके ये विचारों से मुक्त नहीं हो पाएगी। जो महापुरुषों ने मनन किया, चिंतन किया और घूटघूटकर हमें पिलाया गया।

कान का गहना खो जाय तो चिंता मत करना। लेकिन कान का विवेक खो जाय तो बहुत चिंतन करना। कान का झुमका गिर जाय, मारो गोली! कान का किमती कुंडल आप जो पहनते हो गिर जाय तो गया, लेकिन कान का श्रवण विवेक, जिसको मेरी व्यासपीठ श्रवणविज्ञान कहती है वो खो न जाय। और उसका सबसे श्रेष्ठ प्रमाण है 'महाभारत' का कर्ण। कर्ण का अर्थ ही होता है कान। कर्ण के पूरे व्यक्तित्व को पेश किया गया एक इन्द्रिय को चुनकर। श्रवणेन्द्रिय को चुनकर उसका नामाभिधान किया गया कर्ण। और इस तरह का उसको अर्थ लगाने से प्यारा लगता है कि छल करके इन्द्र कर्ण का कुंडल ले गया। उसका एक किमती जन्मजात गहना कुंडल छिन लिया गया, लेकिन उसका जो कर्ण है वो बच गया। और यहां जो गोदावरी के तट पर क्या है? कर्ण काट दिया!

नाक कान बिनु भई बिकराला।

यहां सीधा कान पर प्रहार है। आभूषण नहीं काटे, कान ही काट दिया! बड़ा महिमावंत प्रसंग है ये। इसलिए कर्ण के कान उपर-उपर से अनसुनी करता था। जैसे हम किसी को खुश करने के लिए थोड़ा सुने। लेकिन ये उपर-उपर से तुमने सुना है। तुमने सुना तो तभी-

लगे हैं होठ ऐसे यूं हंसी आनेवाली है।
लेकिन आंख से लगे कि अब रोये हैं।

आंख देखी तो लगा अभी रोया, अभी रोया! राज कौशिक का शे'र है।

कर्ण भीतर से कुछ और सुनता था। कर्ण के पास सभी इन्द्रियां है। आदमी है पूरा वीर लेकिन नाम केवल कर्ण। एक ही इन्द्रिय को महत्त्व दिया गया। एक अर्थ में कर्ण के कान के विज्ञान लिया गया ताकि वो 'गीता' सुन न पाय। कृष्ण की आवाज़ 'गीता' वो सुन लेता तो शायद युद्ध से विरक्त हो जाता। ये भी एक विद्या है। चमड़ी ले ली कर्ण की इसलिए कि वे संवेदना-शून्य हो जाय। लाख कुंता उसको समझाये लेकिन संवेदना जाग्रत न कर पाये। लाख कृष्ण उसको समझाये, कर्ण में संवेदना जाग्रत न कर पाये। मुश्किल क्या है, हमारी इन्द्रियां तमस् में चारा चरती है। माया के खेत में चरती है, ब्रह्म के खेत में नहीं चरती।

गो गोचर जहँ लगि मन जाई।
सो सब माया जानेहु भाई।

गो गोचर; इन्द्रियों के द्वारा जहां-जहां मन जाता है तमस् की यात्रा करता है। तो हमारी सभी इन्द्रियों की ये दशा है। और 'गोदावरी' शब्द समझना है कि दावरी का अर्थ यदि किरन किया जाय तो इन्द्रियों को प्रकाशित करनेवाला एक जीवंत प्रवाह; एक जीवंत धारा, जो हमारी इन्द्रियों को उजागर करे, प्रकाशित करे। और मुझे ये किरणवाला अर्थ रखना है इसलिए कि सूफीज़म में भी 'दावरी' शब्द आया। मूल सूफी किताबों में 'दावरी' शब्द है और वहां 'दावरी' शब्द का अर्थ है नूर। नूर मानी किरण। नूर मानी प्रकाश, उजाला, जो हमें 'तमसो मा ज्योतिर्गमय।' की ओर ले चलता है। और वहां तीन अर्थ मिलते हैं।

वाल्मीकि का प्रसंग आप जानते हैं। वहां वाल्मीकिजी शुरूआत में प्रत्येक इन्द्रियों के प्रकाशित करने के स्थान दिखाते हैं। जिसके श्रवण ऐसे हो, जिसकी जिह्वा ऐसी हो, जिसके हाथ ऐसे हो, जिसके पैर ऐसे हो, जिसकी नासिका ऐसी हो, जिसकी आंखें ऐसी हो।

जिन्हके श्रवन समुद्र समाना।
कथा तुम्हारि सुभग सरि नाना।।

तो, वाल्मीकिजी ने प्रत्येक इन्द्रिय को उजागर करने की हमें दीक्षा दी। सूफीवाद की ओर ध्यान जाता है तो वहां अर्थ हो गया नूर। और वहां तीन अर्थ है। एक अर्थ है नूर, प्रकाश, किरण। दूसरा अर्थ है अनाहत नाद। बिना दर्शन, बिना कुछ आहट किए हुए आवाज़। ये दूसरा अर्थ जो इन्द्रियों का घर्षण ना करे, इन्द्रियों का शोषण ना करे और अंदर डूबी हुई कोई अनाहत आवाज़ प्रकट हो जाय। उसको दावरी कहते हैं। आप ताली लगाये वो भी आहत नाद है, अनाहत नहीं, क्योंकि हाथ का घर्षण ये सब आहत नाद है। हमारी प्रत्येक की

इन्द्रियों में यदि गुरुकृपा हो जाय तो अनाहत नाद सुनाई दे। और गुरु की आप क्या उपासना करोगे? गुरु के लिए एक बात है कि गुरुवचन में निष्ठा ये ही एक मात्र गुरुउपासना। कल पूजनीय कनकेश्वरी माँ भी बोल रही थी कि पार्वती में स्थाननिष्ठा है, लेकिन वचननिष्ठा नहीं है। प्यारा अर्थघटन है। सती में स्थाननिष्ठा है कि सत्ताशी हजार साल तक सती बैठी रही। शिव के वचन उसने नहीं माना! इसलिए 'मानस'कार कहते हैं-

सद्गुरु बैद बचन बिस्वासा।

सा'ब, निष्ठा हो तो सद्गुरु जो बोले वो मंत्र हो जाता है। एक वचन पर आदमी तैर जाता है, लेकिन हमें वचन नहीं मानना है! गंगासती कहती है -

सद्गुरु वचननां थाओ अधिकारी पानबाई।

गुरु के बोल, गुरु के वचन। सबसे बड़ी साधना है गुरुवचननिष्ठा। तूने कह दिया दाता! बात खतम्!

जेहि बिधि प्रभु प्रसन्न मन होई।
करुना सागर कीजिअ सोई।।

लेकिन सती पार्वती बन गई, फिर गुरुनिष्ठा आ गई। 'नारद वचन न में परिहरु।' फिर गुरुनिष्ठा आई। लेकिन एक जनम गंवाना पड़ा! जल जाना पड़ा!

कथा सभी श्रोता और वक्ता का सतीपना मिटाकर पार्वतीपना निर्माण करने की विद्या है कि हमारा सतीपना, हमारी दक्षता, हमारा बौद्धिक अहंकार मिट जाय और हम भावजगत में प्रवेश कर लें। हमने थोड़े शब्द समझ लिये और मान बैठे कि हम तो बहुत दक्ष है!

बस अपना ही गम देखा है।
तूने कितना कम देखा है?

-विज्ञानव्रत

बिलकुल छोटी बहर की गज़ल। दूसरों की बात ना सोची, अपना ही गम! जिसने गुरुवचननिष्ठा को निभायी उसको अनाहत नाद का अनुभव होता है। उसकी इन्द्रियों को बिना घर्षण एक आवाज़ आती है। होठ हिले ना, शब्द सुनाई दे। आंखें कोई किताब में कोई पेरेग्राफ पढ़े ना, लेकिन भीतर उसकी आवाज़ आये। मेरी समझ में यही ऊतरा है कि गुरुवचन में जिसकी निष्ठा होगी उसको ये अनाहत नाद का अनुभव होगा। अनाहत नाद को अनहद नाद भी कहा गया है। असीम, कोई सीमा नहीं।

तो, एक अर्थ होता है नूर, इन्द्रियों को जो प्रकाशित करे। दूसरा होता है बिना घर्षण एक उड़ती आवाज़, एक गुंज। गोदावरी का सूफी में तीसरा अर्थ है खुश्बू, एक महक। इस्लाम धर्म में खुश्बू की बड़ी महिमा है, इत्र की महिमा है। दरगाह पर चादर लगाओ, इत्र छोड़ दो। गुगल-लोबान का धूप। खुश्बू की महिमा है। मुझे बहुत अच्छा लगता है ये व्यासपीठ का तुलनात्मक अभ्यास। हमारी इन्द्रियों में दुर्गंध भरी है वो छूट जाय और इन्द्रियों में भी यदि एक रुहानी खुश्बू आ रही है। इसलिए इस्लाम परस्त, खास करके सूफी परस्त जो-जो भी कलाम आये उसमें खुश्बू की बड़ी महिमा है। जो भी कलाम ऊतरे उसमें खुश्बू का जिक्र होगा ही। और जाने-अनजाने में भी परवीन शाकिर कह गई -

तेरी खुश्बू का पता करती है।
मुझ पे एहसान हवा करती है।

जैसे ओलिया निझाम की बात करता हूं तब कहता हूं कि अमीर खुशरो को लगा कि मुझे मेरे पीर की खुश्बू आ रही है। सद्गुरु की सुगंध भी है। तुलसीदासजी 'मानस' के आरंभ में ही खुश्बू का वर्णन करते हैं।

बंदऊँ गुरु पद पदुम परागा।
सुरुचि सुबास सरस अनुरागा।।

एक सुवास, एक खुश्बू, एक महक। जैसे कहते हैं, बच्चें को अपनी माँ की गंध आती है। ऐसा डोक्टरों से भी मैंने सुना है। एक छोटे-से बच्चे को बहन, बाप, कितनी भी कोशिश करे! रोता हो, गोद में ले ले, लेकिन वो रोता रहेगा, लेकिन जब वो अपनी माँ की गोद में जाता है तो चूप हो जाता है, क्योंकि उसको अपनी माँ की खुश्बू आती है। भटक जायेंगे हम जब तक गुरु की गोद ना मिले। वहां एक खुश्बू है, जो तरबतर कर देती है। इस्लाम में शराब वर्जित है। लेकिन सूफी लोग कोई देवताई मदिरा की बात करते हैं। कोई रुहानियत शराब की बात करते हैं। और उसका सबसे बड़ा दृष्टांत है उमर

खैयाम। हरिवंशराय बच्चन ने भी उसका अनुवाद किया और अंग्रेजी अनुवादकों ने तो उसकी हत्या कर दी! उसने तो एक छोटी-सी शराब जो शीशे में लेकर पीते हैं उसका ये अर्थ लगा दिया! कहां ये रुहानियत, कहां ये 'मानस' की ये स्नेहसुरा! तुलसी जो स्नेहसुरा का वर्णन करते हैं-

जाहिं सनेह सुराँ सब छाके।।

अब जो सुरा और मदिरा, शराब की बात हो रही है तो आज की चेतना उसको बहुत रुहानियत दे रही है। मैं स्वागत करता हूं। शून्य पालनपुरी में शुरूआत हो गई। उमर खैयाम की सभी रुबाई को शून्य पालनपुरीसाहब ने गुजराती में ऊतारा। ये खुदाई शराब है। सबको पीने का अधिकार नहीं!

वाइज़े महोतरम इस तरह आपका
बादाखाने में आना बुरी बात है।
अब आ ही गये तो थोड़ी पी लीजिए,
बिन पीये लौट जाना बुरी बात है।

एक तो कथा में आना मत और आ ही गये हैं तो दो घूंट पी ही जाना, क्योंकि ये तो महोब्बत का मैखाना है। इसलिए मेरी व्यासपीठ की कथा को मैं प्रेमयज्ञ कहता हूं, ज्ञानयज्ञ नहीं। बुद्धपुरुष के हाथ में खोटा सिक्का भी सच्चा लगता है। और बुद्धु के हाथ में सच्चा सिक्का भी गलत सिद्ध होता है! किसने छुआ उस पर डिपेन्ड करता है। ये कौन-सी शराब? ऐसी-तैसी आप पीते हो उसकी बात नहीं है, ये रुहानी खुमारी की बात है। जिसको 'रसो वै सः' कहते हैं। उसकी चार शर्त है।

पहला सूत्र, अधिकार पैदा करना पड़ता है। कौन है इस नशे का अधिकारी? जो परमात्मा के चरण कभी छोड़े ना वो है नशे का अधिकारी। कौन परम भागवत है? शूकदेवजी कहते हैं, जो हरिचरण कभी छोड़े ना। जिसकी गति दूसरी कभी ना हो। पिलाने के लिए तो शास्त्र भरे हैं। जो चाहे ले लो, लेकिन हमारा अधिकार नहीं। शास्त्रों में पड़ा हम सीधा नहीं पी सकते। अधिकार नहीं प्राप्त होता। अधिकार तो गुरुवचन से आता है। ये मस्ती को पीने का कौन अधिकारी? जिसको सत्संग प्रिय है; जिसने बुद्धपुरुष के चरणों को पकड़ रखा है। पकड़ रखा मीन्स स्थूल रूप में नहीं। आश्रय दृढ है। वो ही चरण पकड़ना है, जो पुष्टि मारग में दृढाश्रय कहते हैं।

तो, पहले तो कौन पीये वो निश्चित करना पड़ता है। पहला सूत्र, अधिकार पैदा करना पड़ता है। दूसरा है, ये रुहानी शराब कब पीये? उसकी घूंट कब ले? कब पीये? इतना ही कहूं कि सद्गुरु पिलाये तब। कोई दूसरा न पिला दे! कंपनी खराब ना हो जाय। अपना बुद्धपुरुष पिलाये तब पीना। तीसरी बात सूफीवाद में है कि कहां पीये? लोग बेडरूम में पीते हैं! ड्रोइंग रूम में पीते हैं! घर में पीते हैं! खेत में जाकर देशी दारु पी जाते हैं! सूफीवाद मना करता है। इधर-उधर पीने की मना है। ये खुदाई मस्ती है। कहां पीये? 'मिले कोई ऐसा संत-फ़कीर।' कोई ऐसा बुद्धपरुष मिल जाय तो खूब पीना। उसकी मौजूदगी में पीना। इधर-उधर नहीं। चौथा, कितनी पीये? बुद्धपुरुष तो वैद है। मात्रा दिखा देता है कि बेटा, इतनी पीना। सच्चा बुद्धपुरुष बिना सोचे आपको ये नहीं कहेगा कि चौबीस घंटों तुम रामनाम लिया करो। नहीं, वो मात्रा देगा कि खेत में भी जा, तेरी पत्नी का भी पालन कर, बच्चे के साथ बैठ, चौबीस घंटे नहीं। वो मात्रा देगा। धीरे-धीरे, होले-होले। फिर कह देगा, करो खूब जप।

गुरुकृपा से मेरी समझ में ये आया है कि शूर्पणखा है वो आसक्ति है। साधक को ध्यान रखना चाहिए कि कोई आसक्ति जीवन की पंचवटी में रुचिर रूप धारण करके न आ जाय। जिसको गुरुकृपा से गति करनी हो, धीरे-धीरे इसी जीवन में परम को प्राप्त करना हो, अखंड प्रसन्नता का अधिकारी होना हो उसके लिए बड़ा संकेत है कि जीवन की पंचवटी में यदि रुचिर रूप धारण करके कोई सुंदर-सुंदर आसक्ति हमें प्रलोभित करने के लिए आ भी जाय और उसे अपनी कुछ मर्यादा के कारण बात भी करनी पड़े तो भी बात उससे करियेगा और दृष्टि भक्ति पर रखियेगा। जानकी शुद्धा भक्ति का नाम है। साधक की दृष्टि भक्तिमय हो।

तो, ऐसी गोदावरी के कुछ तटों का दर्शन करें, मानसिक तटों का। 'रामचरित मानस' में सबसे पहला एक तट आता है, सरजू तट। सरजू तट पर प्रजाजनों की चर्चा है, राज-परिवार की चर्चा है। राम-जनम की चर्चा है, ठाकुर ब्याह कर लौटे और सरजू के तट पर बसी अयोध्या नूतन-नूतन समृद्धि से भरे। फिर गंगा के तट पर लक्ष्मण-गीता की कथा है। जहां गुह को विषाद हुआ। निषाद का विषादयोग। उसमें रामानुजाचार्य लक्ष्मणजी ने गुह को जागरुक किया। मंदाकिनी के तट पर भ्रातृभाव की चर्चा है। लंका के वर्णन में सरोवर का वर्णन है, कूप का वर्णन है। सरिता का लंका में वर्णन नहीं है। फिर सरजूतट पर रामराज्य का वर्णन है। एक मात्र गोदावरी का तट है, जहां एक बहन का वर्णन हुआ है। एक भगिनी का वर्णन है।

सूपनखा रावन कै बहिनी।
दुष्ट हृदय दारुन जस अहिनी।
पंचबटी सो गइ एक बारा।
देखि बिकल भइ जुगल कुमारा।।

स्पष्ट रूप में 'मानस' में एक बहन की कथा और वो गोदावरी के तट पर। सरजू के तट पर गोस्वामीजी की लेखनी से भाईयों के खेल की लीला है। गंगा के तट पर केवट का विनोद। मंदाकिनी के तट पर सिय-रघुवीर विहार। लंका में नदी है ही नहीं इसलिए वहां संहार है! एक गोदावरी का तट है जहां एक बहन की कथा है।

गोदावरी तट की पांच कथायें रामगीता, शूर्पणखा का प्रसंग, खर-दूषण का निर्वाण, मारीचवध, पांचवां वैदेही का अपहरण। ये पंचवटी के पंच प्रसंग है। एक ऐसी बहन है जिसका जिक्र करते हुए गोस्वामीजी को लिखना पड़ा, एक भयानक विष से भरी ज़हरीली, एक सर्पिणी की तरह रावण की बहन का परिचय। गुप्तरूपेण गोस्वामीजी बहनों की ओर संकेत करते हैं। बहन यानी भगिनी।

तो, गोदावरी के तट पर दूसरी घटना घटी वो शूर्पणखावाला प्रसंग हमारे जीवन को किस तरह का मार्गदर्शन करता है? शूर्पणखा को आती हुई गोस्वामीजी दिखाते हैं। दंडकवन में रहती थी। स्वच्छंद वन में घूमती थी। एक बार पंचवटी में आती है और दोनों कुमार को, राम-लक्ष्मण को देखकर वो विकल हुई। ये विकलता काम-विकलता थी। दोनों राजकुमार को देखकर उसको लगा कि मुझे भी रूपसुंदरी बनकर जाना चाहिए। इसलिए उसने सुंदर रूप धारण किया। शूर्पणखा अंदर से तो दारुण भयानक दुष्ट हृदय है। सुंदर रूप बनाकर आती है। भगवान राम के पास गई। जानकी मौजूद है। भगवान राम से कहती है, 'तुम्ह सम पुरुष न मो सम नारी।' मेरे समान कौन नारी? ये भी सच, उनके समान कौन नारी? और कहती है, ये संजोग विधाता ने बनाया।

पंडित रामकिंकरजी महाराज की एक व्याख्या है। आपने ये कभी कहा था कि शूर्पणखा की समस्या ये है कि सत् के सामने असत् बोलती है! मेरे समान कोई स्त्री नहीं! और है दुष्ट हृदय, सापिणी। रुचिर रूप लेकर आई है। बोलती है, मुझे अनुरूप पुरुष जगत में नहीं मिला, इसलिए मैं आज तक कुंआरी रही। शादीशुदा तो थी। पति को मार दिया गया था। वो ही शूर्पणखा असत् के सामने सत् बोलती है। जब रावण की सभा में गई तो सत् बोलने लगी। आदमी असत्य दिखाई देता हो तो भी सत्य नहीं छोड़ सकता, किसी बुद्धपुरुष से दीक्षित हो गया हो तो। शूर्पणखा दीक्षित होकर गई है। कानकटी कर दी गई है। शूर्पणखा का लहू जो निकला वो गेरु की धारा है। गेरुए ये कपड़ें पहना दिये। चर्म गेरुआ हो गया। उसकी समझ शायद भीतरी तक पहुंच गई होगी इसलिए असत् के दरबार में वो सत् वचन बोली। एक ओर कहती है, तुम्हारे समान कोई पुरुष नहीं। आपको देखकर मेरा मन माना लेकिन थोड़ा-थोड़ा माना। गुरुकृपा से मेरी समझ में ये आया है कि शूर्पणखा है वो आसक्ति है। और नाखून बढ़ते ही रहते हैं। आसक्ति बढ़ती ही रहती है। और

नाखून जितने बढ़े, समय पर काटने ही चाहिए। और शूर्पणखा की आसक्ति की सबसे बड़ी समस्या है, कहीं स्थिर नहीं है। कभी यहां, कभी यहां भटकाव है। साधक को ध्यान रखना चाहिए कि कोई आसक्ति जीवन की पंचवटी में रुचिर रूप धारण करके न आ जाय। रघुवंश की अच्यूत मर्यादा के कारण बात करनी पड़े तो तुलसी संकेत करते हैं-

सीतहि चितइ कही प्रभु बाता।
अहइ कुआर मोर लघु भ्राता।।

बड़ा प्यारा मार्गदर्शन मिलता है। जिसको गुरुकृपा से गति करनी हो, धीरे-धीरे इसी जीवन में परम को प्राप्त करना हो, अखंड प्रसन्नता का अधिकारी होना हो उसके लिए बड़ा संकेत है कि जीवन की पंचवटी में यदि रुचिर रूप धारण करके कोई सुंदर-सुंदर आसक्ति हमें प्रलोभित करने के लिए आ भी जाय और उसे अपनी कुछ मर्यादा के कारण बात भी करनी पड़े तो भी बात उससे करियेगा और दृष्टि भक्ति पर रखियेगा। जानकी शुद्धा भक्ति का नाम है। जनक तनया, श्री किशोरीजी। साधक की दृष्टि भक्तिमय हो। आसक्ति कहीं कब्जा न कर ले। हमारे जीवन में भी तो हम कभी इस पर आसक्त, कभी इस पर लुब्ध होते हैं! वृत्तियां बदलती रहती है।

भक्तिमय दृष्टिकोण रखते हुए प्रभु ने निर्देश किया कि तुम मुझे ब्याहने का प्रस्ताव रख रही हो, लेकिन मैं ओलरेडी शादीशुदा हूं। मेरी पास बैठी है वो मेरी प्रिया है। ये मेरा भाई जो है वो कुमार है। भगवान ने ये ठीक किया कि अहिनी को अहि के पास भेज दिया। प्रभु ने कहा, अहिकुमार मेरा भाई है, कुंआरा है। और वो वहां जाती है। आसक्ति का क्या ठिकाना? वो लक्ष्मण के पास जाती है। लक्ष्मण सब नीतिसूत्रों की उद्घोषणा करते हैं कि ये स्वामी है जो कुछ निर्णय ले वो उनको शोभे। मैं तो दास हूं। मैं उनका सेवक हूं। और समझाया, मेरे साथ रहोगी तो दासी बनना होगा। भगवान की ओर भेजी! भगवान ने फिर लखन की ओर भेजी! दो भाई मजाक नहीं कर रहे। आसक्ति का हमें परिचय करवा रहे हैं कि आसक्ति कभी प्रवृत्ति की ओर जाती है, कभी निवृत्ति की ओर जाती है। कभी यहां, कभी वहां! उसका कोई ठिकाना नहीं! ये कसोटी है। और भगवान ये भी देखना चाहते होंगे कि रूप तो बड़ा लिया लेकिन स्वरूप? स्वरूप समय आने पर प्रकट हो ही जाता है। और ये सब थोड़ा हुआ इधर-उधर तो तुरंत उसने अपना भयंकर रूप लिया! और सीता पर हमला करने गई कि ये है इसलिए मुझे जगह नहीं मिल रही। यदि उसको हटा दिया जाय तो मेरी जगह यहां हो जाय। आसक्ति चाहती है कि भक्ति मिट जाय तो मेरा नंबर लग जाय। भक्ति को ही खत्म कर दूं। लेकिन भक्ति को कोई मिटा नहीं सकता।

जब जानकी को डरा कर वो करने गई है और उसी समय भगवान ने संकेत कर दिया लक्ष्मणजी को और लक्ष्मणजी ने उसके नाक और कान काट दिये। जब कोई सद्गुरु बुद्धपुरुष दीक्षा देगा तो नाक काट देगा कि स्वर्ग की कामना मत करना। स्वर्ग तो जिसकी शरण में तू आ गया वहां स्वर्ग है। नाक मानी स्वर्ग। अथवा तो मेरी शरण में आ गया और तुझे बहुत प्रतिष्ठा मिल जाय, तेरा नाक बड़ा रह जाय ये भी क्योंकि मेरी शरण में जो आता है उसकी तो दुनियावाले इज्जत खराब कर देते हैं! दीवाना कहते हैं, गालीगलोच करते हैं! और कान काट दिये। जो इन्द्रिय तमस् की ओर जा रही थी उसको सूर्यवंशी ने दीक्षित करके इस कान को काट दिये। जाग्रत पुरुष ने उसको दीक्षित कर दिया ये भी अर्थ कर दिया जाता है। रक्त गेरु की धारा की तरह बहने लगा। वहीं से भागी। खर-दूषण के पास जाती है। उसको उकसाया। फिर आप कथा जानते हैं कि चौदह हजार राक्षसों के साथ संघर्ष हुआ और भगवान प्रत्येक राक्षस को एक दूसरे में रामदर्शन कराते हुए सबको निर्वाण प्रदान करते हैं। वहीं से शूर्पणखा लंका जाती है। रावण को उकसाती है। ये शूर्पणखावाला प्रसंग भी गोदावरी के तट पर घटा है। तो, 'मानस-गोदावरी' के पांच प्रसंगों में ये दूसरा प्रसंग संक्षिप्त करके आपके सामने गाया गया।

मानस-गोदावरी : ५

कथा स्वयं गोदावरी है, उसकी गोद में हम मोद-प्रमोद कर रहे हैं

'मानस-गोदावरी' की कुछ सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा हो रही है। ये प्रेमयज्ञ है रामकथा का। इसमें सबकी इच्छा होती है कि हमारे पास जो विद्या है, कला है, इसकी हम आहुति दे। एक हमारा युवान तळाजा के पास का है, आज-कल वो पूजनीया माँ कनकेश्वरीदेवी की कथा में वायोलिन-वादन करता है। मैंने इससे वायोलिन बजवा लिया। यहां सबका स्वीकार है।

'मानस-गोदावरी'; गोदावरी के तट पर तीन वस्तु प्राप्त होती है। विनोद प्राप्त होता है। और मैं बीच-बीच में विनोद कराता रहता हूं। दूसरा गोदावरी के तट पर मोद की प्राप्ति होती है। मोद मानी प्रसन्नता। आनंद की प्राप्ति होती है। तीसरी वस्तु गोदावरी के तट पर प्रमोद की प्राप्ति होती है। विनोद कभी-कभी तमोगुणी भी हो सकता है। आप व्यंग में किसीका विनोद करे तो वो तमोगुणी है। प्रमोद रजोगुणी होता है। मोद बिलकुल सात्त्विक होता है। तीन गुण किसीको छोड़ते नहीं। इस सृष्टि त्रिगुणमयी है। गुणातीत तो कोई बंदा हो जाता है, बात ओर है। तो ये गोदावरी का प्रवाह मोद की खदान है। आनंद और प्रसन्नता की खदान है। और नदी को खदान कहना ये जरा साहित्य के साथ सुसंगत नहीं होता। खदानें पर्वत में होती है, नदियों में गड्ढें हो, बात ओर है। लेकिन गोस्वामीजी ने एक जगह कहा कि गोदावरी मोद की खदान है।

मोदाकर गोदावरी, बिपिन सुखद सब काल।
निर्भय मुनि जप तप करहिं, पालक राम कृपाल।।

रामाज्ञ प्रश्न; गोदावरी के अगल-बगल जो वन है उस सबके लिए सदा-सदा सुख है। हमारे जीवन में कई घटनायें सुखद होती है, स्वागत है। लेकिन सब सुखद नहीं होती। कई घटना काल परिवर्तन में दु:ख बन जाती है। लेकिन भगवती गोदावरी के तट पर जो मोद की खदान है। बिलकुल निर्भयता से गोदावरी के तट पर बसे ऋषिमुनि रहते हैं। और इसका कारण कृपालु राम इन सबके पालक थे। विस्तार तो व्यासपीठ करती है कि ये मोद भी देती है, विनोद भी देती है, प्रमोद भी देती है। ये कथा की गोदावरी विनोद नहीं देती क्या? मोद; भीतरी प्रसन्नता आ रही है। और प्रमोद भी, कभी ये गाया कभी ये गाया। आनंद-प्रमोद है सब क्योंकि सबके मूल में 'पालक राम कृपाल।'

गीधराज सैं भेंट भइ बहु बिधि प्रीति बढ़ाइ।
गोदावरी निकट प्रभु रहे परन गृह छाइ।

भगवान गोदावरी के तट पर पर्णकुटि बनाकर रहे। यहां का माहौल बदल गया था। जब से राम ने गोदावरी के तट पर बास किया, सब ऋषिमुनि निर्भय हो गये उनका भय चला गया। बन, गिरि, नदी, ताल रोज-रोज सुशोभित है-

जब ते राम किन्ह तहँ बासा।
सुखी भए मुनि बीती त्रासा।।
गिरि बन नदी ताल छबि छाए।
दिन दिन प्रति अति होहिं सुहाए।।

कुल मिलाकर गोदावरी ये एक ऐसा प्रवाह है, जिसमें से पर्वत की खदान से मणि निकलते हैं। गोस्वामीजी इस रूपक को 'उत्तरकांड' में बांधते हैं।

पावन पर्वत बेद पुराना।
रामकथा रुचिराकर नाना।

भक्ति-मणि वहीं से प्रकट होता है। पर्वत की खदान से मणि निकलते हैं, कोयले, हीरे निकलते हैं। लेकिन ये तो प्रवाह है। यहां मणि नहीं निकलते हैं। यहां मोद निकलता है। जीव को प्रमोद की, विश्राम की अनुभूति होती है। तो, ऐसी गोदावरी के तट पर 'मानस' की ये चार पंक्तियां पेश की गई कि जब से राम ने बास किया, सब महात्मा सुखी हो गये। सब भय मिट गये। खग, मृग, जीव सब आनंदित रहते थे। क्योंकि जहां स्वयं रघुवीर बिराजमान है।

'मानस' पर ध्यान दे तो भगवान राम जहां-जहां रहे उस जगह से निकलने के बाद दुबारा वहीं नहीं गये, कुछ अपवाद को छोड़कर। राम भगवान अयोध्या से निकले। पूरी यात्रा चौदह साल की। फिर अपवाद है ये अयोध्या लौटे। वचनबद्धता भी थी। अवतारकार्य भी करना था। रामराज्य की मंगलमय स्थापना करनी थी। ये सब गौण था। व्यासपीठ को एक मात्र कारण दिखता है, भरत की स्मृति कि कोई बैठा है। यदि मैं न गया तो उनका क्या होगा?

कृष्ण वृंदावन छोड़कर गये, फिर वृंदावन ना गये। क्या उसको पता नहीं था कि गोपीजन बैठी है वहां? कृष्ण ने कहा, वृंदावन रहो, मैं आऊंगा। कृष्ण ने वचन नहीं निभाया, लेकिन गोपियों ने आज तक निभाया। वे मथुरा न गई, न गई, न गई! 'कृष्णं वंदे जगद्गुरुं।' 'मेरे गुरु ने कह दिया है।' जा सकती थी। सब भावों से मिश्रित ये गोपांगना बलवा कर सकती थी। जा सकती थी, लेकिन ना गई। एक अर्थ में उसकी वचननिष्ठा। लेकिन यहां रामअवतार का कार्य बिलग है। भगवान राम आये लौटकर अयोध्या। लेकिन केन्द्र में मुझे लगता है, श्री भरतजी है। प्रभु को लगता है, अवधि तक मैं नहीं पहुंचा तो शायद भरत नहीं रह पायेगा। भगवान शृंगबेरपुर भी आये ये सब अपवाद है। गोदावरी के तट पर वापस गये नहीं। मंदाकिनी के तट पर ज्यादा रहे नहीं।

लेकिन वापस गये नहीं। किष्किन्धा वापस गये नहीं। लंका गये नहीं। क्या राम कठोर है? राम करुणा से भरे नहीं है क्या? राम जहां-जहां वापस लौटकर नहीं गये इसका मतलब है कि वहां से वो गये ही नहीं थे!

चित्रकूट रघुनंदनु छाए।
समाचार सुनि सुनि मुनि आए।।

मुझे आपसे ये बात करनी है कि राम गोदावरी का तट छोड़कर गये तो फिर गोदावरी नहीं आये। लेकिन गोदावरी राम के पास गई कि नहीं? राम को अवतारकार्य करना है लेकिन गोदावरी तो प्रवाह है। सबकी अपनी-अपनी रामकथा है। वाल्मीकिजी की अपनी है। मेरे गोस्वामीजी की अपनी है। आदिवासियों की अपनी 'रामायण' है। सबके अपने-अपने राम है।

तुम्ह पावक महुँ करहु निवासा।

इस गोदावरी के तट पर राम ने कहा कि 'जानकीजी, अब आप अग्नि में समाहित हो जाओ।' 'कब तक?' 'जब तक मैं असुरों का नाश कर लूं।' राम का आदेश और जानकी तो समा भी गई। और फिर लंका के मैदान में फिर अग्निदेव आये। अग्निकसौटी करते हैं। लेकिन तुलसी ने संमार्जित किया है कि अग्निदेव स्वयं चंदन की तरह शीतल हुए थे और अग्निदेव स्वयं जानकीजी को लेकर राम को प्रदान करते हैं।

जानकीजी ने कुछ प्रश्न नहीं उठाये कि अग्नि में? नारी सदैव अग्नि में ही समाती रहे। हमारे यहां प्रत्येक शक्ति रूप को हमने पदार्थों में छिपा हुआ पाया है। जो आजका विज्ञान सिद्ध करता है कि हरेक जड़ पदार्थ में भी सुषुप्त शक्ति पड़ी है और ये हमारे शास्त्रों में विपुल मात्रा में मिलता है। राम मानवीय पद्धति से जन्मे हैं। सीता मानवीय पद्धति से प्रकट नहीं हुई। वो तो अकाल पड़ा था। जनक को किसी ने कहा था कि आप हल जोतो और भूमि खनन करो और फिर वर्षा होगी और जनकराज जोते और हल की नोक से वो निकली और जानकी प्रकट हुई। क्या मतलब है? भौतिक विज्ञान भी सहायक होगा उसको सिद्ध करने में भी कि भूमि में भी सुषुप्त शक्ति पड़ी है। कोई निकालनेवाला चाहिए। लंका के रणमैदान में फिर जानकीजी को अग्नि से प्राप्त कर दिया गया इसका मतलब अग्नि में भी शक्ति समाहित है। यद्यपि ये तत्त्व जड़ है। जलतत्त्व से हमने लक्ष्मीरूपी शक्ति को प्रकट कर दी। यद्यपि जल भी जड़ है। ये पदार्थविज्ञान है। पर्वत से हमने पार्वती को प्रकट किया। पार्वती उसको कहते हैं जो पर्वत की बेटी हो।

तो, सीताजी को 'अग्नि में समाहित हो जाओ', ऐसे आदेश की गोदावरी के तट की घटना; ये राम का आदेश तुलसी ने लिखा, हम गाते रहते हैं। लेकिन तलगाजरडा ने रामजी को पूछा कि ठाकुर, सीता अग्नि में समाई थी? क्या ये आपकी करुणा वहां ठीक है? तब मुझे रामने ये कहा कि सीता गोदावरी में समा गई थी, अग्नि में नहीं। अब राम को कैसे मिले? गोदावरी लंका में कैसे लाये? अग्नि तो हर जगह होती है। अगर जल में समाई तो फिर क्या करे? प्रभु ने गोदावरी से कहा कि जानकी को लेकर तुम धीरे-धीरे किसी भी रूप में लंका के समुद्र में समा जाना। और ये मंद-मंद प्रवाह इस गोदावरी, तुलना में शीत है। ध्यान देना, गोदावरी को शांत कहा है उसका एक कारण ये भी होता है क्योंकि उसमें सीता बहती है और जहां सीता बहेगी, 'सीता शांति समाहिता।' शंकराचार्य का वाक्य है। तो फिर भगवान ने कहा कि आप गोदावरी में समा जाओ। और मुझे ये पक्ष अच्छा लगता है। तो दोनों पक्ष रखा जाय। अग्नि में समाई थी वहां से प्रकट की वो भी रखा जाय और तुलसी लिखते हैं, जैसे क्षीरसमुद्र लक्ष्मी को लेकर विष्णु को देते हैं ऐसे सीता राम को समर्पित कर दी गई। तो गोदावरी से वाया सागर फिर वहां जानकी प्रकट हो

सकती है। अब नारी को अग्नि में समा जाना न पुरुषों को करना चाहिए, न मातृशक्ति की मजबूरी होनी चाहिए। अब आपको उसको समाहित करना है तो गोदावरी जैसी गोद में समाहित कर दो। उसको इस प्रवाह में समाहित करो। उसको शीत रखो। देश की सीता गोदावरी में बहे। जले ना; समाप्त ना हो जाय, ये आवश्यक है। इसलिए 'मानस' की सीता को समझना जरूरी है।

सीताजी के दो रूप 'रामचरित मानस' में प्राप्त होते हैं। एक तो वो लीलावाली सीता जिसमें चरित्र लीला की। वाल्मीकिजी सीता के चरित्र को ही महत्त्व देते हैं। दूसरी 'आदि अंबा जानकी।' दो रूप। चरित्रवाली जानकी का परिचय तुलसीदासजी देते हैं-

जनक सुता जग जननि जानकी।
अतिसय प्रिय करुनानिधान की।।

चरित्रवान सीता; लेकिन जिस राम की वो अत्यंत प्रिया है वो राम इसका परिचय क्या देते हैं?

आदि सक्ति जेहि जग उपजाया।
सो अवतरी मोरी यह माया।।

नैमिषारण्य में गोमती नदी के तट पर सालों तक तपस्या करने के बाद मनु और शतरूपा के सामने भगवान प्रकट हुए और साथ में आदिशक्ति है तब राम ने सीता का परिचय क्या दिया कि ये पराम्बा है, आदि शक्ति है। सर्जक पराम्बा है।

हे सोनलमा आभ कपाळी,
भजां तने भेडियावाळी...

जानकी जनक कन्या है, असीम आदि शक्ति है। राम की आदि शक्ति के रूप में प्रकट हुई है। और राम कहते हैं, सब सीता करती है। जो सीता ने व्यासपीठ के साथ जोड़ा है वो सीता सबकुछ करती है। हम थोड़ा कुछ करते तो कहते, हमने ये बनाया! बाप, जानकी ने पराम्बा के रूप में पूरी सृष्टि बनाई जो गोदावरी में बही। लेकिन जानकीजी ने कभी कहा नहीं कि मैंने ये सब बनाया। भगवान तो कभी बोल देते हैं कि ये अखिल विश्व मेरा उपजाया है। 'गीता' में तो कृष्ण ने कहा कि मैं बीज प्रदान करनेवाला बाप हूं। लेकिन माँ? न को! प्रमाण 'मानस।' अयोध्या से धामधूम से बारात आई। उस समय अयोध्या की महत्ता बहुत थी। जनक का राष्ट्र छोटा था। जीवित दशरथ स्वर्ग में जाये तो इन्द्र अर्ध आसन देकर आधे सिंहासन पर दशरथ बैठता था, आधे सिंहासन पर इन्द्र बैठता था। ये मध्यम मारग निकाला था, क्योंकि नियमानुसार इन्द्र सिंहासन से उठ नहीं सकते। चरित्रवाली जानकी सोच रही है, मेरे बाप का राज्य छोटा है। इतनी बड़ी बारात, सेवा में कोई कमी रह जायेगी तो मेरे बाप का थोड़ा वो लगेगा! फिर आदिशक्ति जानकी इतना बड़ा चमत्कार करती है, लेकिन बोलती नहीं। किसी को पता नहीं चलता। गोस्वामीजी लिखते हैं-

जानी सिर्यं बरात पुर आई।
कछु निज महिमा प्रगटि जनाई।।
हृदयँ सुमिरि सब सिद्धि बोलाईं।
भूप पहुनई करन पठाईं।।

ऐसी रिद्धि-सिद्धि ने सृष्टि वहां कर दी, लेकिन तुलसी लिखते हैं -

बिभव भेद कछु कोउ न जाना।
सकल जनक कर करहिं बखाना।

सब कहते हैं, वाह जनकराज, क्या आपने स्वागत किया! अद्‌भुत-अद्‌भुत! जानकी को चमत्कार करना था दुनिया को प्रभावित करने के लिए नहीं, सेवा करने के लिए। और आप जब अपने सर्जन को छिपाओ सेवा के लिए तब यश दूसरों को मिल जाय, लेकिन परम को तो पता लग ही जाता है कि ये देन उसकी है।

सिय महिमा रघुनायक जानी।
हरषे हृदयँ हेतु पहिचानी।

ये महिमा केवल ठाकुर ने जाना। सीता का हेतु ऐसा रहा कि जो बारात में पुरवासी सब आये हैं, जो राम को बहुत

प्यार करते हैं। तो जो मेरे ठाकुर को प्रेम करे उसकी सेवा करना मेरा कर्तव्य है।

सीता ने 'मानस' में दो बार चमत्कार किये। एक यहां और 'अयोध्याकांड' में जानकीजी को रामने कहा था कि आप घर पे रहो। माताओं की सेवा करो। इससे अधिक कोई धर्म नहीं है। 'एहि ते अधिक धरमु नहिं दूजा।' जानकीजी ने नहीं माना, लेकिन पीड़ा मन में रही कि मेरे प्रभु ने मुझे कहा, मैंने माना नहीं! फिर चित्रकूट में चमत्कार किया सेवा के लिए। 'सीय सास प्रति बेस बनाय।' प्रत्येक सासु के प्रति एक-एक जानकी! ये शक्ति है। कौशल्या के पास एक जानकी; सुमित्रा के पास एक जानकी; कैकेयी के पास एक जानकी। सात सौ रानियों का उल्लेख है तो वहां सात सौ सीता! सबकी समान भाव से जानकीजी ने सेवा की है। ये जनाने नहीं देती सदैव। कभी अग्नि में छिप जाती है। कभी गोदावरी में बह जाती है। कभी पर्वत में छिप जाती है। कभी हनुमानजी के हृदय में छिप जाती है। अरे छोड़ो, माँ है। रावण तो दुश्मन है, लेकिन कभी रावण के दिल में भी छिपकर बैठ जाती है। ये पराम्बा आदि शक्ति दासी बनकर चरण में रहती है सीयाजु; आखिर में सर्जक मानी गई है वो परमशक्ति माँ जानकी गोदावरी में बह गई लंका के तट पर सिंधु से हाथ फिर राम को समर्पित हुई।

तो, गोदावरी ऐसी गोद है, जो सबको अपनी गोद में आवरी ले; माँ की गोद। कथा स्वयं गोदावरी है, क्योंकि उसकी गोद में हम मोद-प्रमोद कर रहे हैं। गोद खोजना, गादी मत खोजना। क्योंकि गादी से गोद की महिमा विशेष है। इसलिए मैं व्यासगादी नहीं कहता। ये बड़ा प्रचलित शब्द है इसलिए कभी-कभी बोलना पड़ता है, 'व्यासगादी'-'व्यासपीठ' लेकिन मेरे लिए ये गादी नहीं है, ये गोद है। अने गोदमां होईए त्यारे आपणे बहु हळवाफूल रहीये। गादी पर होइये तो भारेखम थई जाय! गोद में रहो। और मैं फिर घूमकर मेरी निष्ठा पर चला जाऊं कि सबसे अच्छी गोद है सद्‌गुरु की गोद। जिसको सद्‌गुरु मिल जाय उसकी माँ कभी मरती नहीं। साव काठियावाडी बोलीमां कहूं तो, जेने गुरु मळ्यो ई कोई दि नमायो न होय। कहते हैं, कबीर को भी पानी के प्रवाह में छोड़ दिया था। फिर उसको पाया गया। जो जो प्रवाह में आये हैं न साहब, उसको आकाश छोटा पड़ा है! तो गोद है ये। सत्संग संतों की गोद है। शास्त्र ऋषिमुनि-मनीषियों की गोद है। तुलसी कहते हैं, मेरे वचन को बाल-वचन की तरह लेना, क्योंकि मैं गादी में नहीं, गोदी में हूं। कायम बालक रहना, रोज नया सीखना।

जब देवताओं ने कहा कि सीताजी इस दिशा में गई है और भगवान राम तुरंत लक्ष्मण के साथ धैर्य धारण करके पर्णकुटि दक्षिण में रह गई और वो इस तरह सीता की खोज में निकले वहां गोदावरी के लिए 'गोद' शब्द का प्रयोग करके प्रभु स्वयं गोदावरी को प्रणाम करते हैं। प्रभु ने गोदावरी का आभार माना, तुम्हारा धन्यवाद, क्योंकि तुम मेरी जानकी को लिए लंका जा रही है।

तो, ऐसी गोदावरी के तट पर कथा चल रही है। थोड़ा कथा का क्रम। हमने नाममहिमा का संक्षिप्त गायन किया था। उसके बाद 'मानस' के चार घाट की चर्चा है - ज्ञानघाट, कर्मघाट, उपासना का घाट, शरणागति का घाट। चार घाट बनाये। ज्ञानघाट पर शिव-पार्वती बैठे हैं। कथा हो रही है। उपासना के घाट पर बाबाभुशुंडि और गरुड बैठे हैं। कर्म के घाट पर परमविवेकी याज्ञवल्क्य भरद्वाजजी के साथ कथा का वार्तालाप करते हैं। शरणागति के घाट पर बैठकर गोस्वामीजी तुलसीजी स्वयं अपने मन को प्रबोध देते हुए अपने मन को श्रोता बनाकर कथा का गायन कर रहे हैं।

कर्मघाट पर प्रयाग का कुंभ था। याज्ञवल्क्यजी जा रहे थे और भरद्वाजजी ने चरण पकड़े और कहा, मेरे

मन में बड़ा संशय है, मेरा संदेह खत्म करो। मुझे संदेह है कि रामतत्त्व क्या है? इस प्रश्न से कथा का आरंभ होता है। याज्ञवल्क्यजी मुस्कुराकर कहते हैं, आप जैसा महापुरुष कथा सुने तो मैं आपके सामने कथा का गायन करता हूं। सबसे पहले याज्ञवल्क्यजी रामकथा की भूमिका में शिवचरित्र सुनाते हैं। रामकथा के आरंभ में शिव है द्वार, राममंदिर में निजगृह में प्रवेश करने का। बड़ा सेतु तुलसी ने बनाया और पूरा शिवचरित्र याज्ञवल्क्य ने सुना दिया। शिवचरित्र समुद्र है। उसका वेद भी पार न पाये, इसलिए शिवचरित्र सुनाया गया।

कलातीत कल्याण कल्पान्तकारी।
सदा सज्जनानन्ददाता पुरारी।।
चिदानंद संदोह मोहापहारी।
प्रसीद प्रसीद प्रभो मन्मथारी।।
नमामीशमीशान निर्वाणरूपं।
विभुं व्यापकं ब्रह्म वेदस्वरूपं।।

मैं भी युवानों को कहता रहता हूं कि यदि हो सके तो न्हाते समय 'रुद्राष्टक' गाना। तुम्हारी बालदी में रहा किसी भी कुंभ का जल उस समय क्षिप्रा का हो जायेगा, गंगा का हो जायेगा, गोदावरी का हो जायेगा। शिवजी कैलास के वेदविदित वटवृक्ष की छाया में सहज आसन में बैठे हैं। पार्वती भला अवसर देखकर आती है और शिवजी से जिज्ञासा करती है कि राम के संदर्भ में मुझे भी संदेह था। आप मुझे समझाईए कि रामतत्त्व क्या है? शिवजी ने धन्यवाद किया। और भगवान की कथा का आरंभ किया। ईश्वर कार्य-कारण से पर होता है। फिर भी रामजनम के पांच कारण बताये। जय-विजय की कथा। दूसरा कारण सतीवृंदा। उसका पति जलंधर किसी भी देव से मरता नहीं था। कारण था उनकी पत्नी का पतिव्रत। भगवान विष्णु ने छल किया देवताओं के कार्य के लिए जलंधर बनके और वृंदा का पतिव्रत भंग हुआ और जालंधर की मृत्यु हो गई। धर्म के अंचले में हम जीवित है! ये धर्म का दांभिक अंचला मिट जाय तो रामजनम हो जाय।

तीसरा कारण, कथा के रूप में नारद ने भगवान को शाप दिया। और भगवान विष्णु को नररूप धारण करना पड़ा। नारद ने शाप इसलिए दिया कि नारद को अपने रूप का, काम-विजय का अहंकार आ गया था, मैंने काम को जीत लिया और मुझे विष्णु का रूप प्राप्त हो गया! और फिर विश्वमोहिनी को पाने के लिए जाते हैं और उसको प्राप्ति नहीं हुई। इसी मूढता ने शाप दिलवा दिया और कारण बने रामजनम का। मुझे लगता है, हमने विकारों को जीत लिया, इस बात का अहंकार जब तक नहीं मिटता, रामजनम नहीं हो सकता।

चौथा कारण, मनु और शतरूपा की तपस्या। नरसृष्टि का निर्माता मनु है। लेकिन केवल नरसृष्टि का है, पूरे ब्रह्मांड का नहीं है। लेकिन इस भाव में जब कभी चिंतन करते-करते ऐसा अंदर से भाव उठे कि मैं निर्माता आदि पुरुष माना गया हूं, लेकिन इस निर्माता की ओट में कहीं मेरा जनम हरिभक्ति के बिना बीत ना जाय! बड़े-बड़े निर्माताओं को भी ये भाव जगेगा तभी रामजनम की सृष्टि बनेगी। अंतिम पांचवा सूत्र, राजा प्रतापभानु। कामकेतु की जाल में फंस गया! प्रलोभनों की शृंखला का अंत न हो तब तक रामजनम नहीं होता। प्रतापभानु के विनाश के बाद वो रावण बनता है। रावण के निर्वाण के लिए भगवान राम अवतार लेते हैं। रावण, कुंभकर्ण और विभीषण ने तपस्या की। रावण ने अपने वरदान के बल से सृष्टि पर अत्याचार किया। अकुलाई हुई धरती गाय का रूप धारणकर सभी मुनिगण, देवतागण को लेकर ब्रह्मा के पास जाकर रोती है। सबने मिलकर परमतत्त्व को पुकारा। आकाशवाणी हुई, 'हे देवगण, धैर्य धारण करो। मैं कई कारणों से और तत्त्वत: कोई कारण नहीं, अनुग्रह के कारण धरती पर अवतार धारण करूंगा।'

अयोध्या एक सार्वभौम राष्ट्र। रघुवंश का शासन। वर्तमान राजाधिराज दशरथ, धर्मधूरंधर। कौशल्यादि नारियां जो राजा को प्रिय है। एक बार दशरथजी को पीड़ा होती है कि मुझे पुत्र नहीं है। किससे कहे? अपने गुरु के पास जाते हैं। राजद्वार आज गुरुद्वार गये। अपने सुख-दु:ख के समिध लेकर वशिष्ठजी के पास जाते हैं, 'बाबा, मेरे भाग में पुत्र सुख नहीं है?' गुरुदेव ने कहा, 'राजन्, मैं तो कब से प्रतीक्षा में था। आप आओ और ब्रह्मजिज्ञासा करो। एक नहीं, राजन्, आपके यहां चार पुत्रों की प्राप्ति होगी। पुत्र कामेष्ठियज्ञ करना पड़ेगा।' शृंगि को बुलाया गया। पुत्र कामेष्ठियज्ञ आरंभ हुआ। भगतिसहित आहुतियां दी गई। यज्ञ नारायण अग्नि के रूप में स्वयं प्रसाद की खीर लेकर यज्ञ से प्रकट होते हैं। वशिष्ठजी को प्रसाद देकर बोले ये प्रसाद राजा को देना। रानियों को योग्यता के मुताबिक बांट दे। प्रसाद बांटा ही जाय, बेचा ना जाय। राजा ने आधी खीर कौशल्या को दी। पा भाग का प्रसाद कैकेयी को दिया और पा भाग जो शेष रहा उसके दो भाग करके कैकेयी और कौशल्या के हाथों से प्रसन्नता से सुमित्रा को दिलवाया। तीनों रानियों ने प्रसाद पाया। और तीनों रानियों को सगर्भा स्थिति का अनुभव होने लगा। स्वयं हरि कौशल्या के गर्भ में आये। समस्त लोक में आनंद छाने लगा। प्रभु को प्रकट होने की बेला। दिशायें पवित्र होने लगी। पंचाग अनुकूल हुआ। त्रेतायुग, चैत्रमास, शुक्लपक्ष, नौमितिथि, मध्याह्न का सूर्य, अभिजित। मंद शीतल वायु बह रही है। संतों के मन में प्रसन्नता छाई है। गर्भ स्तुतियां होने लगी। ब्रह्म-परमात्मा-ईश्वर माँ कौशल्या के भवन में प्रकट होते हैं-

भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी।
हरषित महतारी मुनि मन हारी अद्भुत रूप बिचारी।।

परमात्मा के दिव्य विग्रह का माने दर्शन किया, मैं किन शब्दो में स्तुति करूं! माँ को ज्ञान हुआ। प्रभु ने मुस्कुरा दिया। फिर माँ मुंह फेर लेती है, आप नर के रूप में नहीं, नारायण के रूप में आये हैं! मुझे नर चाहिए। चार हाथ नहीं, दो हाथ हो। भगवान ने दो हाथ कर लिए। बोले, अब? तो बोली, जन्म लेनेवाला इतना बड़ा नहीं होता, बालक की तरह छोटे हो जाओ। भक्ति का ये सामर्थ्य विराट को वामन कर देता है। अपनी गोद के अनुकूल, अपनी क्षमता के अनुकूल बना देता है। भगवान बच्चे की तरह छोटे हो गये और बच्चे की तरह रोने लगे। बालक की रुदन की आवाज भवन से बाहर गई। रानियां दौड़ आई! महाराज दशरथजी ने सुना कि मेरे घर पुत्रजन्म हुआ, तो ब्रह्मानंद हुआ है। कहा, गुरु को जल्दी बुलाये। वशिष्ठजी पधारे और तय हुआ कि ब्रह्म बालक के रूप में पधारे हैं। महाराज परमानंद में डूब गये। और पूरी अयोध्या में रामजनम के उत्सव का आरंभ होता है। इस कुंभ के पर्व में 'रामचरित मानस' की कथा में पूरे जगत को, पूरे कुंभ को रामजन्म की बधाई हो।

गोदावरी ऐसी गोद है, जो सबको अपनी गोद में आवरी ले; माँ की गोद। कथा स्वयं गोदावरी है, क्योंकि उसकी गोद में हम मोद-प्रमोद कर रहे हैं। गोद खोजना, गादी मत खोजना। क्योंकि गादी से गोद की महिमा विशेष है। इसलिए मैं व्यासगादी नहीं कहता। ये बड़ा प्रचलित शब्द है इसलिए कभी-कभी बोलना पड़ता है, 'व्यासगादी'-'व्यासपीठ' लेकिन मेरे लिए ये गादी नहीं है, ये गोद है। और मैं फिर घूमकर मेरी निष्ठा पर चला जाऊं कि सबसे अच्छी गोद है सद्गुरु की गोद। सत्संग संतों की गोद है। शास्त्र ऋषिमुनि-मनीषियों की गोद है।

कथा-दर्शन

कथा को केवल धार्मिक संमेलन मत समझना।
कथा से फल नहीं मिलेगा, कथा से रस मिलेगा।
फल के रूप में किसी भी चीज की कामना मत करो।
धर्म जब जड़ हो जाता है, तब हिंसा करता है, बेईमानी करता है।
जो धर्म मुस्कुराहट छिन ले, उससे दूरी बनाये रखे।
धर्म का दांभिक अंचला मिट जाय तो रामजनम हो जाय।
प्राप्ति के प्रलोभन में किया गया कोई भी कर्म थोड़ा–बहुत दूषित हो ही जाता है।
प्रेमसाध्य परमात्मा होना चाहिए, तपसाध्य परमात्मा नहीं होना चाहिए।
लोगों को तपस्वी होना है, प्रेमी नहीं होना है! प्रेम स्वयं तप है।
व्यक्ति की भक्ति अव्यभिचारिणी होनी चाहिए।
प्रेमतत्त्व अचल होना चाहिए।
जो आपको प्रिय हो उसका सिमरन करना नहीं पड़ता, हो जाता है।
सभ्यता और संस्कृति प्रवाहमान होनी चाहिए।
निष्ठा हो तो सद्गुरु जो बोले वो मंत्र हो जाता है।
सबसे बड़ी साधना है गुरुवचननिष्ठा।
आंतर्–बाह्य समस्या का उकेल एकमात्र है गुरुकृपा।
गोद खोजना, गादी मत खोजना। क्योंकि गादी से गोद की महिमा विशेष है।
सत्संग संतों की गोद है। शास्त्र ऋषिमुनि–मनीषियों की गोद है।
किसी पहुंचे हुए बुद्धपुरुष के संग सांस ले लो यही स्वर्ग है।
हमको दु:ख हमारे लिए होता है, साधु को दु:ख दूसरों के लिए होता है।
संत लोग तीर्थों का तीर्थपना रिचार्ज कर देते हैं।

मानस-गोदावरी : ६

कलियुग में समाधान केवल गुरुकृपा और हरिनाम से होता है

'मानस-गोदावरी', 'रामचरित मानस' का एक अखंड प्रवाह जो गोस्वामीजी ने हम सबको कृपा करके दिया, इस प्रवाह का हम यथासमझ, यथासमय, यथागुरुकृपा अवगाहन कर रहे हैं। शास्त्रदर्शन करने से पता लगता है कि गोदावरी का प्राकट्य बहुत पुराना है। इवन गंगा से भी पुराना बताया गया है। कहते हैं कि श्री गंगाजी का प्राकट्य उसके बाद हुआ है। यद्यपि भूल मत करियेगा; गोदावरी भी गंगा ही है। गोदावरी पुन्य सलिला गंगा ही है।

कथा मिलती है कि बहुत अकाल पड़ा बहुत समय तक इस भू भाग में। और उस अकाल के समय महर्षि गौतम यहां तपस्या कर रहे थे। गोदावरी के प्राकट्य में निमित्त गौतम है, भगीरथ है। त्रस्त हुई इस भू भाग की जनता। आखिर में सब गौतम के शरण में जाते हैं और महर्षि गौतम जागे करुणावश और मुनिगणों को पूछते हैं, मैं क्या सेवा करूं? कहा, भगवन्, अकाल की परिस्थिति का निवारण किया जाय। हमारे यहां एक काल में सभी समस्या का जवाब तपस्या से पाया जाता था। हमारे यहां एक काल में प्रत्येक समस्या का जवाब यज्ञ के द्वारा दिया जाता था। हमारे यहां एक काल में प्रत्येक समस्या का समाधान केवल, केवल, केवल ध्यान से प्राप्त किया जाता था। हमारी पावनी प्रवाही परंपरा में कलियुग चल रहा है तब कलियुग में समग्र समस्या का समाधान केवल गुरुकृपा और हरिनाम से होता है। भरोसा आये, ना आये, अल्लाह जाने! तुम्हारी तुम जानो! आंतर्-बाह्य समस्या का उकेल एक मात्र है गुरुकृपा।

एक बानि करुनानिधान की।

एक बानी, एक वचन, गुरु का एक बोल। समर्थ का एक लक्ष्य। क्या है? राम का क्या वचन है? हमारी परंपरा में जगद्गुरु की महिमा है। लेकिन कृष्ण जगद्गुरु है, शिव जगद्गुरु है, राम जगद्गुरु है। 'तुम्ह त्रिभुवन गुरु बैद बखाना।' और उसी समय परंपरा में हमारे यहां ये बड़ी पावनी परंपरा आई। और ऐसे कोई बुद्धपुरुष की बानी, कौन-सी बानी? कौन-सा वचन विश्वास?

एक बानि करुनानिधान की।
सो प्रिय जाकें गति न आन की।।

कलियुग में समस्त समस्या का समाधान अनन्य निष्ठा, एक हरिनाम। प्रत्येक काल की समस्या भिन्न होती है। प्रत्येक देश की समस्यायें भिन्न होती है। कहने दो, प्रत्येक व्यक्ति की समस्यायें भिन्न होती है। और इनका समाधान प्रत्येक काल में, प्रत्येक देश में यदि सार्वभौम रूप से कहा जाय तो ये चार उपाय है।

तो महर्षि गौतम की तपस्या ने उस समय जो एक समस्या खड़ी हुई और मुनिगणों ने जाकर प्रार्थना की कि भगवान, आप निवारण करे। इस समस्या से हमें मुक्त करे। और फिर गौतम शिव की आराधना करते हैं। भगवान आशुतोष प्रकट होते हैं। पूछा महर्षि गौतम को। देखिए, तपस्या का बल देखिए। महादेव आज्ञा मांगते हैं कि हुकम करो, क्या किया जाय? बोले, महाराज, इतना बड़ा अकाल; सब त्रस्त है, मुश्किल में है। आप कृपा करो। और महादेव इतने प्रसन्न हुए कि उसने सर पटका, जटा खोल दी और खुलते ही जो पवित्र प्रवाह शुरू हुआ उसीका नाम है गोदावरी। इसलिए शास्त्रों में गोदावरी के लिए एक शब्दप्रयोग हुआ है 'वृद्धगोदा।' ये वृद्ध है, बड़ी उम्रवाली है। गंगा से पहले हैं। इसलिए गोदावरी को भी हम गंगा कहते हैं। प्रत्येक नदियों का वहन बिलग-बिलग दिशा में है। ये गोदावरी दक्षिणवाहिनी है। इसके प्रमाण का मंत्र है। मैं चाहूंगा, हम सब बोलें। ये मंत्र 'वामन पुराण' का मंत्र है।

कालिन्दी पश्चिमे, पुण्या गंगा च उत्तरवाहिनी
विशेष दुर्लभाती गोदा दक्षिण वाहिनी।

अब एक 'ब्रह्मांडपुराण' का श्लोक -

नासिकं च प्रयागं नैमिषं पुष्करं तथा
पंचमंच गया क्षेत्रं षष्ठं क्षेत्रं न विन्ध्यते।

पांच ही तीर्थक्षेत्र है। इनमें पहला नाम नासिक का लिया है। नासिक तीर्थ है। प्रयाग तीर्थराज है। नैमिष परमतीर्थ है। पुष्कर तीरथराज माना गया। और गया, बोधगया हम जिसको कहते हैं। तो बाप, गोदावरी दक्षिणवाहिनी है। और बहती-बहती आखिर में बंगाल की ओर चली जाती है और सिंधु में समाविष्ट होकर फिर सभी जगह लंका में पहुंची। पहले दिन हमने चर्चा की कि गोदावरी के तट पर 'मानस' के आधार पर पांच घटनायें घटी। एक तो लक्ष्मणजी के पांच प्रश्नों के उत्तर रामजी ने दिये जिसको संतों ने 'रामगीता' कहा। दूसरी घटना शूर्पणखावाली। तीसरी घटना गोदावरी के तट पर होती है खर-दूषण निर्वाण की।

धरि रूप पावक पानि गहि श्री सत्य श्रुति जग बिदित जो।
जिमि छीर सागर इंदिरा रामहि समर्पि आनी सो।।

तो बड़ा पावन तीर्थ ये गोदावरी का। तुलसी की दृष्टि में कलियुग के समान कोई ऐसा युग नहीं है। मैं तो कलियुग भी नहीं, उसको कथायुग कह रहा हूं कि ये कथायुग है। श्रवणयुग हो तो फायदा ही फायदा है।

शूर्पणखा जब नाक-कान बिना हुई। कान को श्रुति भी कहते हैं, नाक को स्वर्ग भी कहते हैं। 'न शोचति न कांक्षति।' उसको 'भगवद्गीता' ने नित्य संन्यासी का बिरुद दिया है कि जो अतीत के शोक से मुक्त हो जाता है और भविष्य की कोई कामना नहीं करता है उसको नित्य संन्यासी समझना। ऐसा कहते जगद्गुरु ने प्रत्येक व्यक्ति को दीक्षित करने की कोशिश की। यदि हमसे हो सके तो! कान मानी श्रुति भी। श्रुति मानी वेद भी। इसका मतलब ये भी संकेत मिलता है कि

शूर्पणखा वेदविरुद्ध, वैदिक पथ पर चलनेवाली नहीं, इसलिए उसमें भटकाव है। इसलिए आसक्ति के रूप में कभी इधर कभी उधर भटकती रहती है। शूपर्णखा के जब नाक-कान काटे गये। फिर वो खर-दूषण पास गई। और अपने भाई की पूरी सेना को वो कहती है, आपको धिक् है! आप जैसे भाई हो और मेरी ये दशा? पूछा कि तेरे नाक-कान किसने काटे? तो उसने कहा, पंचवटी में दो रजकुमार आये हैं। उनके साथ सुंदर स्त्री है। मैं ऐसे ही वहां गई थी। उसके छोटे भाई ने मेरा अपमान किया। नाक-कान काट दिये! भटकती वृत्ति बेइज्जत हो ही जाती है। व्यक्ति की भक्ति अव्यभिचारिणी होनी चाहिए। ये उपदेश नहीं, आपके साथ वार्तालाप है। उसने ये नहीं कहा कि मैंने जाकर क्या किया! भाई बात में आ गये! किसी की बिना प्रमाण बातों को सुन लेना खर-दूषणी वृत्ति का नाम है। सावधान रहियेगा। सभी जगह पर कलिप्रभाव है।

ओशो को एक बार कभी किसी ने पूछा था कि महावीर, बुद्ध, गोरख, कबीर, ठाकुर रामकृष्णदेव इतनी-इतनी ज्योत इस मूलक में प्रकटी, फिर भी अंधेरा क्यों है? ओशो का जवाब था, महावीर, बुद्ध, गोरख, कबीर, ठाकुर सब ज्योत जगाकर गये, लेकिन बुझानेवालों की संख्या ज्यादा थी! वे प्रज्वलित करके चले गए। जिम्मेवारी समाज की थी, ज्योत को जलने दे।

आग तो अपने ही लगाते हैं।
गैर तो सिर्फ़ हवा देते हैं।

ज्योत को हमने जलने कहां दिया? यद्यपि इन महापुरुषों ने ऐसी ज्योत जलाई कि बुझे नहीं। बुझ गई होती तो हम याद नहीं करते। हम तो तुले हुए हैं कि कैसे बुझे! ये वृत्ति है खर-दूषणवृत्ति! अपनी बहन को पूछना चाहिए था कि तूने क्या किया था? उकसाना आसान है। पूछना चाहिए था कि बहन, पूरी बात सच-सच बता। बहन के प्रति राग और राम के प्रति द्वेष प्रकट हुआ। रामकिंकरजी महाराज का ये विचार है कि खर-दूषण राग-द्वेष है। बड़ा प्यारा दर्शन है। लेकिन ये राग-द्वेष पैदा किये हैं शूर्पणखा ने। पूरी निशाचर सेना को लेकर वो पंचवटी को घेर लेते हैं। अपने मंत्रीगणों को भेजते हैं कि उसको समझाईये। चले जाय, स्त्री हमको दे दे तो हमें उस सुंदरता का वध नहीं करना है। मंत्री महोदय गया। बात कही और खर-दूषण को देखकर लक्ष्मणजी को राम ने कहा कि सीताजी को लेकर तुम गिरिकंदरा में चले जाओ। राग-द्वेष का हमला हो तब थोड़ा एकांत में हो जाना।

नमामि भक्त वत्सलं । कृपालु शील कोमलं ।।
भजामि ते पदांबुजं । अकामिनां स्वधामदं ।।

ये अत्रि ऋषि के स्तुति के शब्द है। मैं मेरे श्रोताओं को प्रार्थना करूं कि समय हो और मझा आये तो स्नान करते समय 'रुद्राष्टक' का पाठ करो। अत्रि-स्तुति में गोस्वामीजी ने-अत्रिजी ने 'भज्'धातुवाली स्तुति का उपयोग बहुत किया। गुरुकृपा से जब मैं उसको देखता हूं तो बड़ा प्यारा लगता है। 'भज्' धातु; और जिसको भजन करना है उसको 'भज्' धातुवाली स्तुतियों को बहुत पकड़ना। 'भज्' धातुवाली चौपाईयों को मंत्र बनाना।

परमात्मा प्रकट हो कि ना हो, मिले कि ना मिले, मालिक जाने! लेकिन भजन मिल जाय तो बहुत। अत्रिजी अपनी स्तुति में भजन करने की कुछ विधा प्रस्तुत करते हैं कि भजन कैसे किया जाय। तीन प्रकार की विधा अत्रिजी बता रहे हैं। 'भागवत' में ऐसा लिखा है कि जिसको भजनरूपी धर्मसाधना करनी है उसको दो चीज से सावधान रहना। एक तो कैतव और दूसरा मत्सर। 'भागवत'कार भजनानंदी के लिए सूचना देते हैं कि भजन करना हो उसको कपट और मत्सर से मुक्त होना चाहिए। 'भागवत'कार कहते हैं, कपट छोड़कर और मत्सरमुक्त होकर भजन करो। देखो, दो व्यक्ति साथ चले। मित्र हो तो साथ-साथ चल सकते हैं। जगह हो तो साथ चल सकते हैं, लेकिन अक्सर कोई दो कदम आगे चल गया, कोई दो कदम पीछे रह गया। और पीछे रहनेवाले को ये लगे कि मेरे से ये दो कदम आगे हो गया, मैं दो कदम पीछे हूं, उसी समय जो एक खराब वृत्ति पैदा होती है उसीका नाम है मत्सर। 'मत: सर: इति मत्सर।' फिर जीवनदर्शन करते हैं तो ये तो हमारे सबमें है! किसी संतों और महापुरुषों को छोड़कर हम तो उसी में डूबे हैं! धर्मजगत में भी ये बीमारी है! और लोग क्या कहते हैं कि थोड़ा मत्सर तो होना चाहिए। कोई दान दे लाख रुपिये का तो दूसरे को लगे उसको इज्जत मिल रही है, एक लाख का दान दिया तो मैं सवा लाख का दूं। तो ये सवा लाख देने की इच्छा प्रकट हुई ये तो अच्छी मानी जायेगी न? एक ग्रूप कथा का आयोजन कर ले तो दूसरे ग्रूप को लगे, अगली कथा का आयोजन इससे बढिया कर लूं! लेकिन मत्सरमुक्त आयोजन हो तो कथा का आयोजन भजन है। प्रपंच करना है? दिखावा करना है? ये आलोचना नहीं है। हम सबकी ये दशा है!

ओलम्पिक में स्पर्धा होती है, उसमें जो दौड़ होती है, उसमें जो प्रथम आता है उसको स्वर्णपदक मिलता है। लेकिन कई लोग पहला स्थान प्राप्त करे, इसमें ऐसे किस्से आते हैं कि किसी दवाईयों का उपयोग करके दौड़ते हैं! और इन दवाओं के कारण उसकी ऊर्जा कुछ समय के कारण बहुत सतेज हो जाती है और वो सबसे आगे निकल जाता है, स्वर्णपदक पा लेता है। लेकिन जब कमिटी को डाउट होता है तब उसकी जांच-पड़ताल होती है! और जब उसने कोई ड्रग ली थी ये पता लगता है कि इसके कारण ये आगे निकल गया है; ये सहज नहीं था, उधार ऊर्जा लेकर दौड़ा था, उसके स्वर्णपदक छिन लिये भी गये!

भजन करनेवालों, सावधान! आगे तो निकल जाओगे, लेकिन पकड़े जाओगे। यहां तो स्वर्णपदक शायद रख दिया जाय, ऊपरवाला छिन लेगा कि तूने सहज भजन नहीं किया था! तूने कुछ नशे की गोलियां लेकर मुझे भजा था! तुझे किसी से आगे निकल जाना

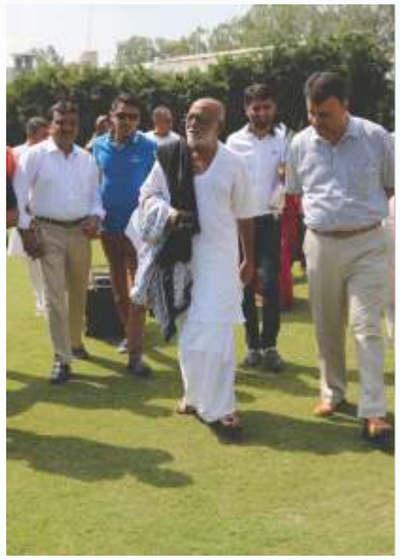

था! जो पीछे रह गया दौड़ में उसमें अपनी मौलिक ताकत थी, भले पीछे रह गया, लेकिन उसको पता है, मैंने कोई दूषित वस्तु का सेवन नहीं किया है। मैं अपनी ऊर्जा से दौड़ा। मैंने भजन केवल एक मात्र मेरे गुरु के बल से किया है। और यही 'भागवत' का सार मेरे गोस्वामीजी अत्रिस्तुति में लाते हैं -

त्वदंघ्रि मूल ये नराः। भजंति हीन मत्सराः।।
पतंति नो भवार्णवे। वितर्क वीचि संकुले।।
विविक्त वासिनः सदा। भजंति मुक्तये मुदा।।
निरस्य इंद्रियादिकं। प्रयांति ते गतिं स्वकं।।

कितनी अद्‌भुत विधा ये मेरे गोस्वामीजी अत्रिस्तुति में प्रस्तुत करते हैं! तो, पहला सूत्र 'भागवत' के अनुकूल हो गया, मत्सरमुक्त होकर हरि भजे। दूसरा सूत्र आया, 'भजन्ति मुक्तये मुदा।' जो प्रसन्नता से भजन करता है। हमें सिखाया गया है, मुंह चढ़ाये बैठो! मुस्कुराना जरूर चाहिए। जो धर्म मुस्कुराहट छिन ले, उससे दूरी बनाये रखे।

जगद्‌गुरु शंकराचार्य के कदमों में कहूं, 'प्रसन्न चित्ते परमात्मदर्शनं।' आदमी यदि प्रसन्न रहता है तो परमात्मा का द्वार खुला। हमें सिखाया गया है, इन्द्रियों को बिलकुल नीरस कर दो! तो बाप, मत्सरमुक्त; प्रसन्नता। और तीसरा भजन की विधा में मुझे जो ठीक लगता है, वो ये है गुरु की गेरहाजरी ना हो। भजन के समय उनकी स्मृति बनी रहे। इसलिए कौन गुरु? जो एक बार हुआ और मिटा दिया वो नहीं। एक बार पकड़ा और छोड़ दिया वो नहीं। इसलिए तीसरी विधा का सांकेतिक संकेत करते हुए गोस्वामीजी अत्रिस्तुति में लिख गये-

जगद्‌गुरुं च शाश्वतं। तुरीयमेव केवलं।।
नमामि भक्त वत्सलं। कृपालु शील कोमलं।।
भजामि ते पदांबुजं। अकामिनां स्वधामदं।।

तो बाप, स्नान करते समय 'रुद्राष्टक' भजन में जिसकी रुचि हो, अनुकूल हो तो अत्रिस्तुति और सायंकाल सोने से पहले 'बंदऊँ गुरु पद पदुम परागा।' अकेले मत सोना। गुरु के चरणों के साथ सोना। और उनके चरण स्थूल नहीं होते। स्थूल चरण चले भी जा सकते हैं। सूफियों में ये कथा है कि ठाकुर के बारे में भी ये कथा है, राधा के बारे में भी ये कथा है। किसी ने भी खोज की है, बडी प्यारी कथा है कि राधाजी का चित्र बनाया। कृष्ण ने राधा का चित्र बनाया ऐसा भी किसी संत से मैंने सुना। बडा हूबहू चित्र बनाया। लेकिन कहते हैं, कृष्ण के चरण नहीं बनाये। सखियां कहती है राधेजु को कि राधे, तूने भगवान का बहुत अच्छा चित्र बनाया, लेकिन एक छोटी-सी कमी, तूने कृष्ण के चरण नहीं बनाये। तब कहते हैं, राधाजी रो पडी! बोली, मैं नहीं बनाउंगी क्योंकि उसको चरण दूं और फिर चित्र भी मथुरा चला जाय तो! एक डर-सा लगता था। गुरुचरण स्मृति, गुरु के वचन की स्मृति ये भजन के लिए आवश्यक माना गया है। ऐसा व्यासपीठ समझती है।

तो बाप, खर-दूषण जब हमला करने के लिए प्रस्तुत होते हैं और सुंदरता देखकर वो भी थोड़ा आकर्षित हो गया और वो गया कि तुम्हारी नारी हमको दे दो। तब प्रभु ने जवाब दिया कि हम क्षत्रिय है। मृगया करना हमारा स्वभाव है। ले कह दे तुम्हारे मालिक को, हम छोटे-बड़े मृग को मारनेवाले नहीं है! फिर तो बड़ा युद्ध हुआ। तुलसीदास युद्ध का वर्णन भी कोई सामान्य नहीं करते। भयंकर युद्ध का वर्णन! लेकिन युद्ध के बहाने जैसे गोस्वामीजी के अंतःदर्शन को हम गुरुकृपा से छूने की कोशिश करे तो युद्ध को बहाना बनाकर तुलसी चाहते हैं, साधक बुद्ध बन जाय। बुद्धत्व की स्थापना। मेरा बुद्धत्व का अर्थ है, 'पायो परम विश्राम।' आदमी परमविश्राम को उपलब्ध हो जाय ये उसका बुद्धत्व है। युद्ध का वर्णन साहित्य में रम्य माना गया। तुलसीदासजी का युद्ध का वर्णन। राम-रावण के लंका के युद्ध का वर्णन।

जोगिनि भरी-भरी खप्पर संचहि।

ऐसा घमासाण युद्ध हुआ कि योगिनी जो थी ये लंका के युद्ध के मैदान में आई और रक्त के खप्पर भर रही है। संचय कर रही है।

भूत पिसाच बधू नभ नंचहिं।

भूतपिशाच ये सब प्रकट हुए युद्ध के समय और भूतप्रेत की स्त्रियों को भूत-प्रेत ने कहा, आकाश में नाचो, आज युद्ध की मेहफिल है! शूरवीरों की खोपडियां लेकर ये जो भूतपिशाच की बहुओं करताल की तरह बजाने लगी! चामुंडा नाना प्रकार के गीत गाती है।

हे सोनल मा आभ कपाळी
भजां तने भेडियावाळी।
उगमणा ओरडावाळी
भजां तने भेडियावाळी।

तो, खर-दूषण का युद्ध बड़ा भीषण है। ये मरते नहीं और तात्त्विक दृष्टि में भी राग-द्वेष मरते नहीं। पतंजलि योगसूत्र में भगवान पतंजलि ने पंचकलेश की बातें की। हम सबके जीवन में पांच कलेश होते हैं। उसीको ही तुलसीदासजी मिटाने को कहते हैं कि हमारे कलेश मिटे।

श्री गुरु चरण सरोज रज, निज मन मुकुर सुधारि।
बरनउँ रघुबर बिमल जसु, जो दायक फल चारि।।
बुद्धि हीन तनु जानिके, सुमिरौ पवन-कुमार।
बल बुद्धि बिद्या देहु मोहिं, हरहु कलेश बिकार।।

पंचकलेश है इनमें बहुत भयानक कलेश, अभिनिवेश भी कलेश है। अस्मिता भी कलेश है। इनमें राग और द्वेष जीवन का बहुत बड़ा कलेश है। और पंडितजी 'महाभारत' का स्मरण करके आपको कह रहा था कि खर-दूषण राग-द्वेष है। लाख लड़ो! स्वयं राम भी उसके साथ बार-बार प्रहार करते हैं, लेकिन ये मरते नहीं है! और हमारी सबसे बड़ी मुश्किल ये है कि हमारे राग-द्वेष भी मिटते नहीं! बस, मैं आपके साथ हूं। कोई उपदेश नहीं है। सत्संग करते हैं, जप करते हैं, लेकिन अवसर आने पर राग-द्वेष फिर प्रकट हो ही जाते हैं, खबर नहीं! लेकिन छोड़ना मत। यही मात्र एक उपाय है कि कभी ना कभी इससे मुक्ति मिलेगी। तो, पतंजलि ने कहा, सुख के प्रति आकर्षण उसका नाम राग है। दुःख के प्रति उपेक्षा का अभाव उसका नाम द्वेष है। और फिर बहुत युद्ध के बाद प्रभु ने निर्णय ये किया कि कुछ ऐसा करूं कि परस्पर राम का दर्शन करा दूं! एक राक्षस उसमें राम को देखे, वो उसमें राम को देखे! और सबको लगा, जिसको मारना है, बिलकुल निकट है, मार दिया जाय! और जब राम समझकर मारता है तो निकलता है अपना ही आदमी! इस तरह परस्पर राम को देखकर पूरी खर-दूषण की सेना निर्वाण को प्राप्त हो गई। पंडितजी का सूत्र हम सबको संदेश दे गया कि जब तक हम और आप एकदूसरे में राम

परमात्मा प्रकट हो कि ना हो, मिले कि ना मिले, मालिक जाने! लेकिन भजन मिल जाय तो बहुत। 'भागवत' में ऐसा लिखा है कि जिसको भजनरूपी धर्मसाधना करनी है उसको दो चीज से सावधान रहना। एक तो कैतव और दूसरा मत्सर। भजन करना हो उसको कपट और मत्सर से मुक्त होना चाहिए। फिर जीवनदर्शन करते हैं तो ये तो हमारे सबमें है! किसी संतों और महापुरुषों को छोड़कर हम तो उसी में डूबे हैं! धर्मजगत में भी ये बीमारी है! और लोग क्या कहते हैं कि थोड़ा मत्सर तो होना चाहिए। एक ग्रूप कथा का आयोजन कर ले तो दूसरे ग्रूप को लगे, अगली कथा का आयोजन इससे बढिया कर लूं! लेकिन मत्सरमुक्त आयोजन हो तो कथा का आयोजन भजन है।

का दर्शन नहीं करेंगे तब तक राग-द्वेष का नाश नहीं होगा।

किसको पत्थर फैंके कैसर, कौन पराया है?

शिशमहल में हरएक चेहरा मुझसा लगता है।

पूरे प्रसंग का यही सार है कि हम और आप एकदूसरे में रामदर्शन करना शुरू करे तो राग-द्वेष छूट जाय। खर-दूषण और सेना खत्म हुए तब तक शूर्पणखा इधर-उधर साक्षी बनकर घूम रही थी। खर-दूषण का ये विनाश देखकर अब शूर्पणखा रावण की ओर चल पड़ी। फिर वहां रावण को उकसाती है। तो, गोदावरी दक्षिणवाहिनी है। गोदावरी गंगा से भी पुरानी नदी है। ऐसा शास्त्रवचन है।

कल हम सबने भगवान राम के प्राकट्य का गायन किया। कैकेयी माँ ने एक पुत्र को जनम दिया और सुमित्रा ने दो पुत्रों को जनम दिया। चार पुत्रों की प्राप्ति से आनंद चौगुना हुआ। 'मानस' में लिखा है, रामजनम के बाद जो ब्रह्मानंद और परमानंद की मस्ती हुई वो एक महिने तक अखंड रही। और उसका काव्यात्मक रूप दे दिया कि रामजन्म के बाद एक महिने तक रात्रि हुई ही नहीं, दिन ही रहा! ये तो जरा बुद्धिगम्य नहीं लगता। लेकिन साधुओं से अर्थ सुना है कि राम-जनम के बाद एक महिना तक रात नहीं हुई, इसका मतलब किसी भी व्यक्ति के जीवन की अयोध्या में रामतत्त्व आ जाय तो मोह की रात्रि आ ही नहीं सकती। मोह का अंधेरा जीवन में प्रविष्ट हो ही नहीं सकता। तुलसी ने मोह को रात्रि कहा है।

तो एक महिने का दिन मानी एक महिने परमानंद में डूबे रहे। दिन बीतते चले और चारों भाईयों के नामकरण का समय निकट आया। महाराज दशरथजी ने अपने ज्ञानी गुरुदेव को प्रार्थना करके विप्र के साथ निमंत्रित किये आदि- आदि। दशरथजी को वशिष्ठजी ने कहा, जो आनंद का सिंधु सुखराशि है समग्र जगत में व्याप्त परमतत्त्व है, जिसके नाम से विश्राम मिलेगा, आराम मिलेगा; जो नाम विश्राम, आराम, विराम देनेवाला है उसका नाम मैं राम रखता हूं। सभी ने रामनाम का स्वीकार किया। उसका तात्त्विक अर्थ है, राममंत्र गुरु ही दे सकता है। और बिलकुल राम के समान कैकेयी पुत्र का नामकरण करते वशिष्ठजी बोले, हे राजन्, जिसके नाम से विश्व का भरणपोषण होगा, जो सबको भरेगा, सबका पोषण करेगा, ऐसे कैकेयी के पुत्र का नाम मैं भरत रखता हूं। जिसके स्मरणमात्र से वैरवृत्ति का नाश होगा, शत्रुता मिट जायेगी, उसी बालक का नाम शत्रुघ्न रखता हूं। गोरखनाथ ने लिखा है कि सद्गुरु तीन वस्तु छुड़वा देते हैं- 'नारी, सारि किंगुरी सतगुरु तीनों परिहरी।' कौन बुद्धपरुष? नारी का खाली अर्थ करोगे तो स्त्री को छुड़वा दे। बहनों का अपमान नहीं होगा। गोरख जैसी ऊंचाई अद्भुत! राजेन्द्रभाई की अच्छी गज़ल है -

आंगन आंगन अलख जगाया गोरख आया।

जागो रे जननीना जाया गोरख आया।

तो, नारी का एक अर्थ ऐसा भी लगाया गया कि न अरि उसका नाम नारी। कोई मेरा दुश्मन नहीं, शत्रु नहीं, ऐसी अवस्था का नाम नारी। सारी का अर्थ है सुक, सारिका यानी मैना। किंगुरी का अर्थ है सारंगी। अब सारंगी को छोड़ देना ये तो मुझे भी राश ना आये! प्राणवाद्य है और उसको छोड़ने की बात गोरख कहे! तो, शायद गोरख ये कहते हैं कि सारंगी छोड़, इधर-उधर के बेकार रंग छोड़ और राम जो परमतत्त्व है उसके रंग में रंग जा। नामकरण में वशिष्ठजी ने कहा, जिनसे शत्रु नहीं, शत्रुता मिटे वो शत्रुघ्न। वैरी नहीं, वैर मिटे। आखिर में तीसरे बेटे का नामकरण करते हुए बोले, समस्त लक्षणों का जो धाम है, समग्र जगत का जो आधार तत्त्व है, इस बालक का नाम लक्ष्मण है। राजन्, ये पुत्र नहीं, ये वेदों के सूत्र है। तुम बड़भागी हो। फिर क्रम में प्रभु की बाललीला चलती है।

गोदावरी का दर्शन तात्त्विक दृष्टिकोण से होना चाहिए

'मानस-गोदावरी', जो इस रामकथा का केन्द्रस्थ विषय है। गंगा को हम कभी जननुकन्या भी कहते हैं। श्री गंगाजी को हम भगीरथनंदिनी भी कहते हैं। यमुनाजी को हम सूर्यकन्या कहते हैं, रवितनया कहते हैं। गोदावरी मेकलसुता है। गोदावरी को एक अर्थ में ब्रह्मकन्या कहते हैं, क्योंकि ब्रह्मगिरि से प्रकट हुई है। और इसी गोदावरी को गौतमकन्या भी कहते हैं। इसलिए गोदावरी का पावन नाम है गौतमी।

किसी भी विषय का हम अपने आंतरिक विकास और विश्राम के लिए निरूपण करें तो पांच दृष्टिकोण से निरूपण होना चाहिए। गोदावरी का निरूपण भी पांच दृष्टि से होना चाहिए। एक तो होती है, ऐतिहासिक दृष्टि कि किसी युग में प्रकट हुई। कालगणना की जाती है। कहां-कहां बही। देश की चर्चा होती है। ऐतिहासिक दृष्टि से निरूपण करना पड़ता है। दूसरा दृष्टिकोण होता है बाप, वैज्ञानिक दृष्टिकोण। किसी वस्तु का वैज्ञानिक परीक्षण। पौराणिक दृष्टि से कल हम सोच रहे थे कि गोदावरी को वृद्धा गोदावरी कहा है। ये बड़ी-बुढ्ढी है यानी गंगा से भी पुरानी उसको बताई गई। अब प्रत्येक ग्रंथ में बिलग-बिगल बात मिलती है, इसलिए उनमें हम न जाय कि कौन पहले?

आज दो चिठ्ठियां भी है कि बापू, मन में नहीं बैठता कि गोदावरी गंगा से भी पुरानी? न बैठे तो गंगा को पुरानी समझो। जंजट छोड़ो यार! कहीं तर्क-वितर्क लेकर मत जाना, तत्त्व लेकर जाना। छोड़ दीजिए ये काम विशेषज्ञों पर जो परीक्षण करके हमारा मार्गदर्शन कर सकते हैं।

तो, एक तो एतिहासिक दृष्टि से गोदावरी का दर्शन किया जाय। दूसरा वैज्ञानिक दृष्टिकोण और तीसरी दृष्टि है मेरी समझ में व्यावहारिक दृष्टि से गोदावरी का दर्शन किया जाय। उसमें पानी है। तटवालों को जल मिलता है। खेत

में अन्न पैदा करती है। तृषातुर की तृषा मिटती है। ये सब व्यावहारिक दृष्टिकोण है। उस पर डेम बना दो। पानी की राशि इकठ्ठी कर लो। समय पर छोड़ो आदि-आदि। एक चौथा दृष्टिकोण होता है भावनात्मक दृष्टिकोण कि कुंभ में स्नान करे। हमें पुन्यप्राप्ति हो ये सब भावनात्मक दृष्टिकोण। हम धन्यता महसूस करे। हमने कुंभ में, गोदावरी में स्नान किया। हमने शाही स्नान किया। उसका एक भावनात्मक रूप है।

मुझे लोग पूछते हैं कि बापू, 'हनुमानचालीसा' में लिखा है, 'अष्टसिद्धि नौ निधि के दाता।' हमें तो कुछ नहीं मिला! न सिद्धि मिली, न निधि मिली! मेरी समझ में तो फिर ये ऊतरता है कि हनुमानजी आपको अष्टसिद्धि नहीं देगा, लेकिन यदि आप हृदय से उसका पाठ करे तो अष्टशुद्धि जरूर देगा। आठ प्रकार की शुद्धि जरूर प्रदान करेगा। और ये तो अनुभव की बातें है। नव निधि को मेरी व्यासपीठ नव भक्ति कहती है। 'हनुमानचालीसा' का आश्रय करे, पाठ करे, उनको नवधा भक्ति प्राप्त हो जाती है किसी न किसी रूप में। तो, ये करने से ये लाभ होगा! पुण्य लाभ होगा! होगा जरूर भावना जगत में लेकिन लाभ लेनेवाली बात मेरी व्यासपीठ को राश नहीं आती। और मेरी कथा सुनते हो तो कहीं से भी कोई लाभ लेने की आदत मिटाओ। सबसे बड़ा लाभ हमको मिला है, मानवदेह का। इससे भी बड़ा लाभ मिला है वो देह भी पृथ्वी पर। इससे भी बड़ा लाभ हमें भारत में देह मिला जहां इतने अवतार आये; जहां इतने संत-महापुरुष आये, मनीषी आये, ऋषि आये, हरक्षेत्र के विशेषज्ञ आये। तो, लाभ की बात ही छोड़ो। मैं फिर कहता हूं, कथा से फल नहीं मिलेगा, कथा से रस मिलेगा। कितने लोग श्रद्धा से यहां बैठते हैं! कोई रोड पर, कोई शिबिर में, कोई कहां, कोई कहां! ये भावदृष्टि है उनकी। उसका खंडन नहीं होना चाहिए। लेकिन इसके पीछे ये लाभ होगा, ये लाभ होगा! यद्यपि ये वर्णन मिलता है। लेकिन मैं इनमें ना जाउं, क्योंकि ये मेरे स्वभाव से अनुकूल नहीं है।

होईहि सोई जो राम रचि राखा।

पांचवीं दृष्टि व्यासपीठ कहना चाहती है, वो दृष्टि का नाम है तत्त्वदृष्टि। आप मेरे श्रोता है, आपके ध्यान में होना चाहिए कि मैं अकसर कथा के आरंभ में बोलता हूं कि आईए, इस विषय की कुछ सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा करें। क्या मतलब है? तत्त्वदृष्टि से अवलोकन किया जाय। तो गोदावरी का दर्शन भी तत्त्वदृष्टि से होना चाहिए। तत्त्व उसको कहते हैं, जो कभी बदले ना, अचल रहे। उसको तत्त्व कहते हैं। भाव उसको कहते हैं, जिसमें ऊतार-चढ़ाव बनता रहता है। तत्त्व में कभी वृद्धि नहीं रहती। तत्त्व तत्त्व रहता है बाप।

सामान्य तत्त्व में भी वेदांत कहता है कि वध-घट नहीं होती तो परमतत्त्व को कैसे आप कहो कि ये बढ गया, ये कम हो गया, ये असंभव है। 'हिमगिरि कोटि अचल रघुबीरा।' गोस्वामीजी ने लिखा कि रामतत्त्व क्या है? करोडो-करोडो कैलास की तरह अचलता का नाम कैलास है। दशरथ के आंगन के अजीर-बिहारी ये किसी का बेटा राम है। मिथिला में ब्याहने जाये ये राम ओर है। वन में जाये राम ये उसकी लीला है, लेकिन तत्त्वत: राम 'हिमगिरि कोटि अचल रघुबीरा।'

तो, व्यावहारिक दृष्टि से हम देखें तो गोदावरी का एक अंश देखा। गोदावरी को आत्मसात् नहीं कर पाये! तत्त्वत: निरूपण होना चाहिए। ये सर्वोपरि निरूपण है। हम तीन प्रकार से दुनिया में प्रेम करते हैं। एक प्रेम होता है, व्यावहारिक दृष्टि से। अरे, कब आये यार! बहुत दिनों के बाद मुलाकात हुई! ये सब व्यावहारिक प्रेम हो जायेगा। दूसरा भावनात्मक प्रेम। हम लोगों ने भी मंच पर से बहुत व्यावहारिक बात की। बहुत भावनात्मक बात कही और अभी कह रहे हैं। लेकिन अब निमंत्रण है तात्त्विक दृष्टिकोण का। सालों लग गई यहां पहुंचने में! मेरे पुराने श्रोता सब जानते हैं जो चालीस साल से मुझे सुन रहे हैं। अब जरूरी है ये तत्त्व तक पहुंचने के लिए। नरसिंह मेहता कहते हैं -

ज्यां लगी आत्मा तत्त्व चीन्यो नहीं,
त्यां लगी साधना सर्व जूठी।

तो, एक तो व्यावहारिक प्रेम। दूसरा भावात्मक प्रेम। इसमें चढ़ाव-उतार आता है। कभी आपको किसी की याद में रोना आता है। कभी कुछ दिन रोना आये ही ना! कभी स्मृति बहुत आनंद दे। कभी स्मृति बोल भी बने। लेकिन 'मानस' हमें जहां ले जाना चाहता है वो केवल व्यावहारिक प्रेम की चर्चा नहीं है। वो भावनात्मक प्रेम की चर्चा नहीं है, वो चर्चा है -

तत्त्व प्रेम कर मम अरु तोरा।

राम कहते हैं, जानकी से संदेश भेजते हैं कि मैं केवल व्यावहारिक प्रेम का संदेश नहीं भेजता हूं; भावनात्मक प्रेम का संदेश नहीं भेजता हूं; मैं तो तत्त्व प्रेम की चर्चा तुम्हारे पास भेजता हूं।

जानत प्रिया एकु मनु मोरा।।

जानकी, आपका और मेरा जो तत्त्वप्रेम है, उसको केवल मेरा मन जानता है। यहां मन को स्थापित किया। जानकीजी ने भगवान से पूछा कि आप संदेश भेजते हैं तत्त्वप्रेम का और आप दावा करते हैं कि मेरा ही मन जानता है। तो आपके मन और मेरे मन के रूप भिन्न है? वो तो एक ही होना चाहिए। एक ही होने के कारण आपको ये रोना-धोना नहीं होना चाहिए। क्योंकि हमारा और आपका मन एक है। अचल तत्त्व की जब चर्चा है तो हम एक है। तो किसके लिए आप रो रहे हैं? किसके लिए ये संदेश भेज रहे हैं? भगवान ने जवाब दे दिया कि हमारा मन एक है, लेकिन कठिनाई ये है कि 'सो ममु सदा रहत तोहि पाहीं।' ये मन मेरे पास नहीं रहता। मैं करूं क्या? इसलिए मैं तेरे पास संदेश भेज रहा हूं। मैं तो केवल प्रेमरस जानता हूं। प्रेमतत्त्व अचल होना चाहिए। ये दृष्टिकोण होना चाहिए। संतों ने लिखा है कि वेद में कृष्ण को खोजने गया तो नहीं मिले। शास्त्रों में नहीं मिले। तीर्थों में नहीं मिले। तो फिर कहां मिले? तो, घूमते-घूमते कुंजगली में गया और राधिका सोई थी। राधिका का पैर दबाते हुए मैंने गोविंद को पाया! तुम्हें अच्छा क्या लगता है? सखियां फिर पूछती है। राधा ने कहा, वो जो भी करता है वो मुझे अच्छा लगता है। ये प्रेमतत्त्व की अचलता है। जिसमें ऊतार-चढ़ाव ना हो। राज कौशिक की एक कविता है -

खुदा तुझे, तू मुझे याद बात एक ही है।
खुदा तेरे, तू मेरे साथ बात एक ही है।
खुमार रबका मेरा दिन गुजार देता है।
तेरे नशे में कटे रात बात एक ही है।

इधर राधिकाजी कहती हैं, वो जो भी करता है मुझे अच्छा लगता है। बात एक ही है। तत्त्वत: एक है। तो जानकी, मेरा मन ही प्रेम का तत्त्व जानता है और समस्या ये है कि ये मन सदा-सदा तेरे पास रहता है।

तो, एक व्यावहारिक प्रेम है। एक भावनात्मक प्रेम है। एक प्रेम का तत्त्व है। जीव धीरे-धीरे क्रमश: तत्त्व की ओर गति करे ये आवश्यक है। तो बाप, गोदावरी का दर्शन तत्त्वदृष्टि से क्या है? इस पुन्यसलिला ने हमें कौन-से तत्त्व की ओर संकेत किया? तत्त्व है मेरी समझ में गुरुकृपा से ये कि राम नहीं आये जब तक गोदावरी के तट पर तब तक गोदावरी के अगल-बगल के प्रदेश में मुनियों को शाप लगा हुआ था। और जैसे ठाकुर का गोदावरी के तट पर निवास शुरू हुआ तब से शाप, संताप, सब मिट गया। मेरी दृष्टि में गोदावरी का तात्त्विक दर्शन है, यहां आने से शाप, ताप, संताप मिटता है।

ठाकुर रामकृष्ण परमहंस के आश्रम में एक कालु नामक भगत था। एक छोटी-सी कोटडी में रहता था और इतने देवताओं को अंदर बिठाये रखा था कि बा मुश्किल बेचारा अंदर सो पाता था! गणेश, लक्ष्मीजी, चामुंडाजी, महालक्ष्मीजी; यहां विष्णु है, हनुमान है, ब्रह्माजी है; यहां नर-नारायण है; यहां तिरुपति बालाजी है। राधा-क्रिष्ण, फलां, फलां! विवेकानंदजी

अकसर यहां जाते थे और कहते थे कालु, ये क्या तमाशा है? तेरी जगह तो थोड़ी रख! निकाल दे ये सब! निकालना तो दूर, एक ओर देवता ले आता था!

मुझे कई गृहस्थों के घर जाने का अवसर आता है। मैं जाता हूं तो कई भाई-बहनों के मंदिर में इतने देवता बैठे हैं और बेचारे भयभीत हो जाते, निकाल भी नहीं सकते, क्योंकि वो महात्मा ने दिया! न लूं तो! मैं आपसे प्रार्थना करूं, कोई आप के यहां आये और अपना देवता देने लगे तो उसको तुम्हारें घर से पांच-पांच देवता देने लगो, तुम जरा हल्के-फूल्के हो जाओ। ईश्वर तभी मिलेगा जब ये देवतायें हमारे कंधे से ऊतर जाय। भार-भार! मेरा बस चले तो मैं दुनिया को बिना भार का भगवान देना चाहता हूं कि जो बोज न बने हमारा।

एक दिन विवेकानंदजी ने ठाकुर परमहंस के पास बैठे हुए कहा कि 'भगवंत, ये कालु बड़ा नासमझ है! मैं कितनी बार कहता हूं कि तूं विश्राम कर सके इतने देवता तो कम कर! मेरी मानता ही नहीं!' ठाकुर ने कहा, 'इनमें कालु का दोष नहीं, तेरे आदेश का दोष है।' तो बोले, 'मैं तो दिल से बोलता हूं।' 'बिना कमाई किये हुकम करता है! थोड़ी साधना बढा फिर हुकम कर।' और कहते हैं, विवेकानंदजी ने अनुष्ठान किया। अनुष्ठान पूरा होने के बाद कालु के पास जाकर कह दिया, निकाल सब देवता! अपनी पोटली में सब बांधकर कालु उसी समय गंगा में बहा देता है। आशीर्वाद किसका लगे? जिसके पास कमाई हो। हुकम किसका लगेगा? और लोग जहां-तहां शाप दते हैं!

मैं कथाओं में और एक-दो प्रवचनों में कह चुका हूं कि शाप मत दो। जीव को सावधान करो। इक्कीसवीं सदी है। संशोधन होना चाहिए। 'श्रीमद् भागवत' में कहा गया कि वक्ता ऐसा होना चाहिए कि जो वेद-शास्त्र में देश-काल के अनुसार संशोधन करे। ये मेरे वचन नहीं है, महापुराण के वचन है। मूल को पकड़कर कुछ बातें कुछ बिलग महक फैलानी चाहिए। मूल को छोड़ा न जाय। आशीर्वाद कमाई के बाद दिये जाते हैं। उसकी जगह समाधान करो। 'तू पास हो जायेगा, बेटा', ऐसे आशीर्वाद की जगह समाधान करो कि बेटा, थोड़ा पढ़ ले। बराबर अभ्यास कर। मेरी शुभकामना है। समाधान होना चाहिए। 'सावधान' और 'समाधान' दो शब्द मुझे राश आते हैं। 'रामचरित मानस' में दोनों शब्दों का स्वीकार किया है।

तो बाप, गोदावरी का तत्त्वरूप ये है मेरी समझ में कि यहां आदमी बैठ जाय, शांति मिलेगी। क्योंकि राम के आने के बाद यहां उग्रता मिट गई थी। शाप समाप्त हो चुका था। गोदावरी का दूसरा तात्त्विक रूप है, राम के आने के बाद गोदावरी में एक ऐसा तत्त्व निरूपित किया गया कि यहां ऋषिमुनि राम के आने के बाद भजन-साधन जो करते थे वो सुछंद, भयमुक्त करते थे। कोई रोक-टोक नहीं थी। कोई बाधा नहीं थी। ये गोदावरी के प्रवाह का दूसरा तात्त्विक दर्शन है।

गोदावरी का तीसरा तात्त्विक दर्शन है कि गोदावरी के तट पर परमात्मा के मुख से सत्संग सुनने को मिलता है, जैसे 'रामगीता।' ये तो प्रसंग आबद्ध है। एक संन्यासी शंभुगिरि महाराज; चालीस साल पहले की बात। यहां पंचवटी प्रदेश में उसका विचरण होता था। एक बार तलगाजरडा आये थे। हमारी चर्चा हुई। मैंने कहा, आप नासिक क्षेत्र में बहुत विचरण करते हैं तो आप वो ही स्थान में क्यों घूमते रहते हैं? तो बोले, बापू, मैं गोदावरी के तट पर चूपचाप बैठता हूं मध्यरात्रि के बाद तब मुझे लगता है राम मुझे 'रामगीता' सुना रहे हैं! ये तत्त्व है। चौथा गोदावरी का तात्त्विक रूप व्यक्ति को भय मुक्त विचरण करने का मौका देगा। सत्संग प्रदान करेगा। यहां यदि आदमी लक्ष्मण की अदा से बैठ जाय, गोदावरी बोलती है, मुखर है। हमारे कान न सुने तो गोदावरी क्या करे? शूर्पणखावाला प्रसंग मैंने आपके सामने अतिसंक्षेप में पेश किया।

गोदावरी के तट पर तात्त्विक संदेश ये है कि आप स्वर्ग की कामना छोड़ दो। अल्लाह करे, तुम्हारी नाक कट जाय! नाक मानी स्वर्ग। कामनायें समाप्त हो जायेगी। और इस प्रवाह का एक संकेत है कि यदि तुम इस स्थान पर पहुंच जाओ तो शास्त्र भी तुम्हारे लिए पूरा हो जाएगा। जगद्गुरु शंकर ने कहा कि तत्त्व को प्राप्त करने के लिए शास्त्र तेरे लिए बेकार है। और यदि तत्त्व को तूने जाना नहीं तो भी शास्त्र तेरे लिए बेकार है। नाक-कान कटा इसका तात्त्विक संदेश है कि ये भूमि हमें स्वर्ग की कामना से मुक्त कर देती है। ये भूमि हमें इस तत्त्व की पहचान करा देती है कि शास्त्र पीछे रह जाते हैं। क्योंकि बड़ी चीज आ गई, छोटी छूट गई। छोड़ने का अभिमान भी नहीं होता। छोड़ देने की प्रसन्नता होती है।

कल मैंने खर-दूषणवाली बात सुनाई कि चौदह हजार राक्षसों का निर्वाण हो गया। गोदावरी के प्रवाह का तत्त्व है निर्वाण। ये निर्वाण देती है। तुलना में ओर नदियों ने बाढों से जितना नुक्सान किया, गोदावरी ने इतना नुक्सान नहीं किया है। ये विनाशकारी नदी नहीं है। ये निर्वाण देनेवाली नदी है। फिर मारीचवध का प्रसंग आता है 'मानस' में। इसी भूमि पर राम ने ललित नरलीला का आयोजन किया। जानकी समा गई। मारीच को लेकर रावण आता है आदि। गोदावरी सुमति की दाता है। शूर्पणखा रही तब तक कुमति थी। लेकिन गोदावरी के तट पर रहने के कारण एक घटना एसी घटी कि गोदावरी का आशीर्वाद लेकर परोक्ष-अपरोक्ष कैसे भी माँ ने उसको आशीर्वाद दे दिया कि शूर्पणखा जैसी दुष्ट हृदयी स्त्री उसको सुमति प्रकट हुई और वो रावण की सभा में नीतिवचन का उच्चारण करने लगी और फिर कहीं दिखती नहीं।

मारीचवध में परमात्मा प्रियतम है। मारीच उसका प्रेमी है। और मारीच जिस रूप में परमात्मा के पास आता है और उसको प्रियतम के दर्शन प्राप्त हो जाता है। गोदावरी का तट प्रेमी को प्रियतम की प्राप्ति करा देता है। मारीच का प्रेम अद्भुत है। रावण ने मारीच से कहा, चल, मुझे उस नारी का अपहरण करना है। तो मारीच समझा रहा है कि विश्वामित्र के यज्ञ में बिना फणे का बाण मारके सतजोजन फेंक दिया उसके साथ विरोध करना ठीक नहीं। आठ लोगों का विरोध नहीं करना चाहिए। एक शस्त्री, जिसके पास शस्त्र हो। मर्मी; हमारे अंदर के भेद जानता हो उनसे विरोध न करे। प्रभु; प्रभु का अर्थ है समर्थ का विरोध न करे। शठ; जिसमें शठता भरी है उसका विरोध न करे। धनी; धनवान के साथ विरोध न करना। वैद; डोक्टर से विरोध ना करे। बंदीजन; बंदीजन के कई अर्थ। कवि-सर्जक इनके साथ विरोध ना करे। कवियों से विरोध ना करे। भानस; रसोई करनेवालों से विरोध ना करे। जब रावण ने मारीच को कहा कि मेरे साथ नहीं आया तो मैं मार दूंगा तब मारीच को लगता है, वहीं जाउंगा तो राम के हाथ से निर्वाण पाउंगा। और यही ये भूमि है जहां जानकीजी की ललित नरलीला का आरंभ हुआ है। अग्नि में समाई अथवा तो गोदावरी के प्रवाह में बह गई सीताजी। और सीताहरण इस भूमि पर घटी घटना। ये भूमि रावण जैसे असुरों को भी असली नहीं तो छाया की भक्ति भी जलवा देती है। दूसरे अर्थ में रावण जब जानकी की छाया को ले गया तब आकाश मारग से जा रहा है। असली भक्ति तो अग्नि में समा जाती है।

थोड़ा समय कीर्तन करें। विश्ववंद्य गांधीबापू ने समूह प्रार्थना की। व्यक्तिगत प्रार्थना तो हो, लेकिन सामूहिक प्रार्थना। माताजी का गरबा क्या है? सामूहिक दुर्गा साधना है। देहातों में बहुत बीच में माताजी को किसी भी रूप में रखकर सामूहिक रास लेना, गरबा लेना ये दुर्गा की सामूहिक साधना का बहुत बड़ा योगदान है। सूफियों का सामूहिक नृत्य सामूहिक साधना का संकेत करता है। हमारे वेदों ने कहा था -

सहनाववतु। सह नौभुनक्तु। सह वीर्यं करवा वहै।
तेजस्वि नावधीतमस्तु। मा विद्विषावहै।
ॐ शांतिः शांतिः शांतिः।

निष्कुळानंदजी कहते हैं -

वेश लीधो वैरागनो, देश रही गयो दूर जी;
उपर वेश आछो बन्यो, मांहि मोह भरपूरजी.

मोह का नाश तो तभी होता है, जब परस्पर रामदर्शन हो।

सकल लोकमां सहुने वंदे,
निंदा न करे केनी रे।

सामूहिक द्वेष ना हो। भोजन सामूहिक हो। तो, हरिनाम का कीर्तन सामूहिक साधना का परिचय है।

चार पुत्रों का नामकरण संस्कार हुआ। चारों भाई कुमार अवस्था में आये। यज्ञोपवित संस्कार हुआ। वशिष्ठजी के आश्रम में राजकुमारों को भेजे हैं। वशिष्ठजी के पास अध्ययन करते हैं। जिसकी श्वास और उच्छवास की प्रक्रिया ही वेद है ऐसे भगवान किसी के पास पढ़ने जाय ये लीला है! आप राम को मानव समझो, लेकिन उसका ब्रह्मत्व भूलो मत। मानवरूप में हमको मानवजीवन की दीक्षा मिलती है राम से और उनके ब्रह्मरूप से हमें भक्ति प्राप्त होती है। जगत को बताया कि पढ़ना चाहिए। भगवान राम अल्पकाल में विद्या प्राप्त कर लेते हैं। घर आकर राम आचरण में दिखा रहे हैं। सुबह में राम उठकर मातृ-पिता-गुरु तीनों को प्रणाम करते हैं। बुझर्ग को प्रणाम करने से आयु बढ़ती है। जो आयु है, उसमें आनंद मिलेगा। विद्या बढ़ती है। कीर्ति-प्रतिष्ठा बढ़ती है और आत्मबल की वृद्धि होती है। माता-पिता-आचार्य को आदर देना ये हमारी परंपरा है। राम वो करते हैं।

भगवान राम सखा और भाईयों के साथ सरजू के तट पर गेंद से खेलते हैं। कभी-कभी सखाओं और भाईयों को लेकर राम वनविहार करने जाते थे और वहां असुर लोग मृग का रूप लेकर ऋषिमुनियों की साधना में बाधा डालते थे; आदिवासी लोगों को परेशान करते थे; ऐसे असुर थे उसको परमात्मा निर्वाण देते थे। लीलायें चली। विश्वामित्र ने सोचा, साधना-बल से मैं क्रोध करके शाप देकर इन राक्षसों को जला सकता हूं, लेकिन मेरी तपस्या का क्या? तपस्या का परिणाम क्रोध? ना। तपस्या का परिणाम तो परम शांति होनी चाहिए।

विश्वामित्रजी अयोध्या आते हैं। मनोरथ करते-करते आते हैं। सरयु में स्नान करके राजा के दरबार में जाते हैं। राजा ने पूजा की। भोजन करवाया। राम का दर्शन करके विश्वामित्रजी स्तंभित हो जाते हैं! तुलसीजी कहते हैं, मनु-शतरूपा ने कितने उपवास किये! बिलकुल क्षीण हो चुके थे बिना भोजन तब जाके परमात्मा प्रकट हुए। और मनु-शतरूपा को गोमती के तट पर नैमिषारण्य में दर्शन हुए। एक पक्ष तो स्थापित हो गया कि बहुत उपवास करो तभी परमात्मा का दर्शन होता है। और गोस्वामीजी ये भी पक्ष देते हैं कि नहीं, ये केवल आदर्श नहीं बन जाना चाहिए। यहां विश्वामित्र महाराज छप्पन भोग भोजन करने के बाद बैठे हैं और राम-दर्शन हो जाता है। कभी बहुत तपस्या के बाद हरि मिलता है, कभी भोजन करने के बाद मिलता है। चित्त की शांति और चैतसिक प्रसन्नता नष्ट हो ऐसा व्रत, ऐसा तप न करना। दशरथजी ने पूछा, मैं आपकी क्या सेवा करूं? विश्वामित्रजी ने अपनी बात रखी, 'महाराज, असुरों हमें सताया करते हैं। अनुज के साथ मुझे राम दे दो।' भारत का साधु सम्राट के घर जाये तो संपत्ति नहीं मांगता, उसकी संतति मांगता है। दशरथजी ने स्पष्ट रूप से इन्कार भी कर दिया। फिर वशिष्ठजी भी थे। समझाने में आया, दे दो। राम-लक्ष्मण को आदेश मिला। माँ के पास आशीर्वाद लेने जाते हैं। दोनों भाईयों को पाकर विश्वामित्र को लगा कि महानिधि प्राप्त हुई। ताडका आती है। प्रभु एक ही बाण से ताडका को निर्वाण दे देते हैं। मारते नहीं, तारते हैं। भगवान ने ताडका को निजपद दिया तब विश्वामित्र को लगा कि ये ब्रह्म है। दूसरे दिन यज्ञ का आरंभ हुआ। दोनों भाई सुरक्षा में लगे। सुबाहु आया। जलाकर प्रभु ने भस्म किया! मारीच आया। प्रभु ने बिना फणे का बाण मारकर शतजोजन अपनी लीला में सहयोग के लिए रावण की ओर भेज दिया!

असुर को मारकर भगवान ने महामुनि का अनुष्ठान पूर्ण किया। कुछ दिन विश्वामित्र के आश्रम में रुके। एक दिन विश्वामित्रजी ने कहा कि राघव, जनकपुर में एक बहुत बड़ा यज्ञ हो रहा है वो भी पूरा कर दीजिए। रघुकुलनाथ हर्षित होकर मुनि संग चलते हैं। रास्ते में अहल्या का भी एक प्रतीक्षा का यज्ञ था वो भी प्रभु पूर्ण करते हैं। अहल्या का उद्धार होता है। कभी-कभी रूपचांचल्य, वृत्तिचांचल्य, नेत्रचांचल्य, आदमी बड़े घर में रहता हो तो भी भूल करवा देता है! न्याय करना बहुत मुश्किल है कि दोष किसका था? इन्द्र का, अहल्या का या दोनों हिस्सेदार है? तो, अहल्या को गौतम का शाप मिला। अहल्या जड़ चट्टान की तरह शापित हुई! बोध इतना ही जिस चंचलता ने भूल करवाई इस चंचलता को समेटकर स्थिर हो जाना, पत्थर हो जाना। जिसको कोई नहीं बुलाता उसको हरि बुलाते। विश्वामित्रजी संग गौतम का आश्रम आते प्रभु ने जिज्ञासा की ये किसका आश्रम है? चट्टान की तरह ये चेतना है कौन? बोले, राघव ये गौतमनारी पापवश नहीं, शापवश है। यद्यपि भूल हुई है, किसी ने शाप दे दिया, आप कृपा करो। स्त्री की समाज में पुन:प्रतिष्ठा हो। राघव, कृपा करो; औषधि प्रदान करो। आप कृपासिंधु है। राम ने एक क्षण का विलंब न किया। तत्क्षण घटना घटी। कमज़ोरी मानकर कबूल करो। परफेक्ट मानकर निकालोगे तो कोई नहीं मिलेगा। प्रश्न उठता है, मर्यादा पुरुषोत्तम जो रघुवंशी राम, उसने पैर से छूना कहा, सुसंगत था? पवित्र चरण ने स्पर्श किया है। कई महापुरुष कहते हैं, राम पैर से छूने गये और हवा का झौका आया और पैरों की चरणधूली उड़कर संगदिल अहल्या के शरीर पर ये रज गिरी और प्रकट हो गई! राम को पैर से छूना ही ना पड़ा।

एक मोमबत्ती जली है, दूसरी किसी कारणवश बुझ गई है। अहल्या जली हुई मोमबत्ती थी। किसी कारणवश बुझ गई थी। बुझी हुई मोमबत्ती के पास एक जली हुई मोमबत्ती निकट ला दी जाए तो छलांग लेकर बुझी हुई मोमबत्ती जला दी ऐसा भी हुआ हो। अहल्या को पुन: जागृत किया। पत्थर पिघला। आंखों से अश्रुधारा बही। अहल्या पतिलोक गई। पतितपावन का बिरुद सार्थक करके राघव आगे बढ़े। गंगा के तट पर आये। गंगा के अवतरण की दिव्य कथा विश्वामित्र ने सुनाई। प्रभु ने गंगास्नान किया। तीर्थों के देवताओं को दान दिया और प्रभु जनकपुर पहुंचे। विश्वामित्र-मुनिगणों के संग एक बाग में ठहरे हैं। जनक को खबर मिली। जनकजी आते हैं। जनकराज जिज्ञासा करते हैं, महाराज, कहो, ये सुंदर दोनों बालक है कौन? विश्वामित्र ने एक ही जवाब दिया, राजन्, ये तत्त्व वो है जो पूरी सृष्टि में सबको प्रिय लगता है। सांकेतिक ईशारा कर दिया कि ये वो परमतत्त्व है। जनक ने स्वागत किया। जनकपुर में सुंदरसदन में ठाकुर को ठहराया और भगवान दोपहर को मुनिसंग भोजन करते हैं। सब ने विश्राम किया।

मैं कथाओं में और एक-दो प्रवचनों में कह चुका हूं कि शाप मत दो। जीव को सावधान करो। इक्कीसवीं सदी है। संशोधन होना चाहिए। 'श्रीमद् भागवत' में कहा गया कि वक्ता ऐसा होना चाहिए कि जो वेद-शास्त्र में देश-काल के अनुसार संशोधन करे। ये मेरे वचन नहीं है, महापुराण के वचन है। मूल को पकड़कर कुछ बातें कुछ बिलग महक फैलानी चाहिए। मूल को छोड़ा न जाय। आशीर्वाद कमाई के बाद दिये जाते हैं। उसकी जगह समाधान करो। 'सावधान' और 'समाधान' दो शब्द मुझे राश आते हैं। 'रामचरित मानस' में दोनों शब्दों का स्वीकार किया है।

गोदावरी सनातन धर्म की प्रवाहित सरल-तरल धारा है

'मानस-गोदावरी' की हम कुछ सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा कर रहे हैं गुरुकृपा से, संतकृपा से। 'रामतीर्थम् रामकृतम्।' यहां तपोवन में रामतीर्थ है। त्र्यंबकेश्वर में ब्रह्मतीर्थ माना जाता है। ब्रह्मकुंड है। वहां शिव, यहां राम। इसलिए इस पुण्य क्षेत्र को संतों ने हरिहरक्षेत्र भी कहा है। और आनंद 'रामायण' में उल्लेख प्राप्त होता है कि 'रामतीर्थम् रामकृतम् सीता लक्ष्मण संस्कृते।' यहां का जो रामतीर्थ है, रामकृत है, राम सर्जित है, राम द्वारा निर्मित है। और उसी तीर्थ में भगवान राम ने लक्ष्मण सीता सहित स्नान किया। प्रतिदिन किया करते थे। निवास किया। 'तीर्थे यत्र गौतमाभ्यां।' ये गोदावरी के तट पर 'प्रवाह धारा दृश्यते।'

इस परम पावन तीर्थ में गोदावरी क्या है? प्रवाह धारा। परंपरा प्रवाही होनी चाहिए। कट्टर और जड़ नहीं। कोई भी नदी की धारा प्रवाहमान ही होती है। ये गोदावरी का तात्त्विक दर्शन जो हम कर रहे थे इसका मतलब है, गोदावरी सनातन धर्म की प्रवाहित सरल-तरल धारा है। सभ्यता और संस्कृति प्रवाहमान होनी चाहिए। यदि वो कट्टर हो जाय, जड़ हो जाय तो संस्कृति का पोत कमजोर हो जाता है। और तथाकथित कई सभ्यतायें, तथाकथित कई धर्मधारायें शताब्दियां बीत गई फिर भी अपनी जड़ता और कट्टरता न छोड़ पाई! और हमारी सभ्यता वैश्विक धारा है। मैं किसी का नाम न लूं, लेकिन कई तथाकथित धर्मधारायें जड़ और कट्टर है! मेरे 'मानस' में कलि प्रभाव का वर्णन करते हुए गोस्वामीजी ने कहा है -

कलिमल ग्रसे धर्म सब लुप्त भए सदग्रंथ।
दंभिन्ह निज मति कल्पि करि प्रगट किए बहुपंथ।।

कई लोगों ने अपनी मनमानी करके कई पंथ प्रकट कर दिए ऐसा तुलसी कहते हैं। ये तो तुलसी उदार है इसलिए उसको पंथ भी कहते हैं, बाकी न ये धर्म है, न ये संप्रदाय है, न ये पंथ है! दूसरों के खेत में बिना पूछे बनाई पगदंडियां है कि आप जल्दी मोक्ष प्राप्त कर लोगे! ये छोटी-बड़ी पगदंडियां है और परिणामस्वरूप जड़ता पकड़ लेती है। कल एक महापुरुष को मिलने गया वो बहुत प्यारी बात करते थे कि बापू, हमारी धारायें तो छोटी-छोटी होती है, लेकिन कोई महाधारा मिलती है तो हम उसमें अपनी धारा मिला देते हैं तो सागर तक पहुंच जाये। प्लीज़, अपनी छोटी-छोटी विचारधारायें, तथाकथित धर्मधारायें सनातन धर्म की प्रवाहधारा में मिला दी जाय तो क्षीरसिंधुवाला विष्णु दूर नहीं। और अकेला विष्णु नहीं, लक्ष्मी सह मिलेगा। गोदावरी का बहुत तात्त्विक अर्थ यही है कि ये प्रवाहमान है। धर्म जब जड़ हो जाता है, तब हिंसा करता है, बेईमानी करता है। मैं आपसे बात करता रहता हूं कि परंपरा जड़ नहीं होनी चाहिए, प्रवाही होनी चाहिए।

आपके घर की दीवारें होती है वो जेल की दीवार जितनी मजबूत नहीं होती, लेकिन घर की दीवार कमजोर हो तो भी चैन है। जेल की दीवार बहुत मजबूत है, लेकिन जेल, जेल है। द्वार तो घर में भी होता है और जेल में भी होता है, लेकिन घर के दरवाजे बाहर से भी बंद किया जाता है और अंदर से भी बंद किया जाता है। जेल के दरवाजे बाहर से ही बंद किया जाता है, अंदर से कोई व्यवस्था है ही नहीं। जब चाहे खोलकर निकल नहीं सकता। धर्म ऐसा होना चाहिए कि आदमी जब द्वार खोले तब खूले। बंदी बना दिया हमको! और गोदावरी की कथा हमें प्रवाहमय धर्म की सूचना देती है, जड़ता की नहीं। गोदावरी के पीछे बहुत-सी कथायें लगी हुई है और सबके केन्द्र में गौतम है। और इसीके कारण ये गौतमी है। एक ओर कथा सुन लीजिए।

एक जिज्ञासा है, 'बापू, मैं राम में मानता नहीं हूं, फिर भी रामकथा सूनता हूं। मुझे रस मिल रहा है। मेरी प्रसन्नता बढी है, लेकिन मूल में मैं नास्तिक हूं।' आप राम को माने न माने इससे मेरी कथा का क्या लेना-देना? मैं स्वागत करता हूं इस नास्तिक श्रोता का और राम को न मानने पर ये नास्तिकपना होते हुए भी यदि रामकथा में आपको रस मिल रहा है और आप सुन रहे हैं तो ये तो बड़ी प्रसन्नता की बात है मेरे लिए। लेकिन मैं मानता हूं कि नहीं मानता हूं, वो बात भूल जाओ। एक डोक्टर के पास आप जाये और आप कहे कि मेरा इलाज करो, लेकिन मैं एलोपथी में नहीं मानता हूं। डोक्टर कहे, तू माने न माने एलोपथी से क्या लेना-देना? इलाज करवा लेना। राम को माने न माने, बंदा, इलाज कर लेना! और एक बार बीमारी निकल जायेगी तो फिर तू माने बिना रह नहीं पाओगे। जब तक स्वस्थता नहीं आती दुनिया में कौन मानता है? और जब स्वस्थता आ ही जाती है, बीमारी मिट जाती है तो साधक की मजबूरी होती है, माने बिना रह नहीं सकते! इसलिए आप मानो न मानो इससे कोई लेना-देना नहीं। किसी धर्म के अनुयायी हो, कोई लेना-देना नहीं। आप किसी भी संप्रदाय के हो, स्वागत है। लेकिन कथा के प्रवाह में आपको यदि आनंद आ रहा है तो ये इलाज हो रहा है।

सद्गुरु बैद बचन बिस्वासा।
संजम यह न बिषय के आसा।।

इलाज करवाओ प्यारो! और यदि अंदर से नीरोगिता आ जाय तो भी मानने और न मानने से कोई रास्ता नहीं है। वैद को इतनी ही अपेक्षा होती है कि स्वास्थ्य प्राप्त हो। और आप कहेंगे कि बापू, स्वास्थ्य मिलने का प्रमाण क्या? देखो, जिसको बुखार होता है उसको भूख नहीं लगती। खाने की याद ही नहीं होती। लेकिन जब बुखार ऊतर जाता है तो भूख लगने लगती है। मेरे गोस्वामीजी 'उत्तरकांड' में कहते हैं -

सुमति छुधा बाढइ नित नई।

जब सद्बुद्धि की भूख लगे तब समझना, बुखार उतर रहा है। खोराक शुरू हो गया सुमति का। शरीर में शक्ति आने लगती है।

बिषय आस दुर्बलता गई।

झूठे रसों की इच्छाओं की दुर्बलता कम होने लगी। बिमल ज्ञान, बिमल वैराग्य, पवित्र ज्ञान और वैराग्यरूपी जल में उसको नहाने की इच्छा होती है तभी स्वास्थ्य प्राप्त किया गया ऐसा समझना।

तो, गौतमी की एक ओर कथा। भूमि पर ये वरुण देव बहुत कुपित थे। और तभी सभी ऋषिगण, देवतायें गौतमऋषि के पास जाते हैं और कहते हैं, भगवन्, आपकी तपस्या के बल से वरुण को प्रसन्न करो। वर्षा हो और अन्नजल सबको प्राप्त हो। पशु-पक्षी बच जाय, खेत हरे-भरे हो जाय। और तपस्या के बल से महर्षि गौतम ने वरुणदेव को प्रसन्न किया और कहा कि आप बरसो। तब वरुणदेव ने कहा कि आप एक कुंड बनाओ, जिसका नाम ब्रह्मकुंड रखो। मैं बरसूंगा और इनमें पानी भर दूंगा। पूरे भू-भाग में पानी-पानी कर दूंगा। लेकिन ये कुंड आप पहले बनाये, इनमें मैं बरसूंगा। और पानी का संचय होगा फिर कभी उसमें से पानी कम नहीं होगा। तो, ब्रह्मकुंड में फिर वो पानी भर गया। और गौतमपत्नी अहल्या और ऋषिपत्नीओं में लड़ाई हो गई। किस बात पर? अहल्या ने कहा, इस ब्रह्मकुंड का जल पहले मैं ही पीऊंगी, क्योंकि मेरे पति ने बताया। खबरदार, किसी ने पीया तो! ये बात सब मेरे दिमाग में ऊतरती नहीं! और कथा है तो करूं भी क्या? ऋषिमुनि की पत्नीओं ने शिकायत की कि हमको जल पीने नहीं देती। तो, ये ऋषिमुनि गणेशजी के पास गये। गणेश को कहा कि आप कुछ हमारी मदद करो। गौतम की पत्नी अहंकारी हो गई है। उसको गौतम की पत्नी होने का गर्व है और ये गौतम कुछ कहते नहीं है। आप कुछ ऐसा करो कि गौतम की तपस्याभंग हो और गौतम इस क्षेत्र से भाग जाय। क्योंकि सब क्षेत्र में गौतम को बहुत आदर मिल रहा था। और किसी एक को ज्यादा आदर मिले तो सहधर्मियों से सहन नहीं हो सकता। चाहे वो ऋषिमुनि हो तो भी क्या? क्योंकि पंचभूत के शरीर में तीनों गुण होते ही है। गुणातीत तो कोई ब्रह्मानंद ही होता है।

समझ में नहीं आता, विवेक का देवता चढ़ क्यों गया? पहले तो गणेश ने डांटा। तुम इर्ष्या क्यों करते हो? जिसने उपकार किया उसके प्रति इतना दुर्भाव! लेकिन महात्माओं ने प्रशंसा करके गणेश को और फुलाया। अब गणपति ने गाय का रूप लिया। और गौतम का एक क्षेत्र था यहां का और वर्षा के कारण सब खेत हरे-भरे हो चुके थे और गणेशरूपी गाय गौतम के खेत में चल पड़ी! गौतमऋषि तपस्या में ध्यान में थे। उसकी दृष्टि गाय में रही। अब मेरी समझ में ये नहीं आता कि ऋषि ध्यान में थे तो गाय में दृष्टि कैसे गई? प्रश्न ही प्रश्न है! जो हो, उनकी दृष्टि गई। अब तपस्या से उठे तो अनुष्ठान-भंग! क्रोध करे तो भी अनुष्ठान-भंग! गाय खेत का सबकुछ बिगाड़ रही है। करे तो भी क्या? तो बैठे-बैठे ऋषि गौतम ने एक दर्भ का तिनका लिया मंत्र भणा और तिनका फैंका। गणेश गाय बनकर आये थे उसको लगा। गाय मर गई और मुनियों के पास विरोध करने का निमित्त मिल गया कि गौतम ने गौ हत्या की! निकालो उसको! कैसे भी वो यहां से जाये। फिर गौतम कहते हैं, यदि आप कहते हो तो मैं जाउं। मेरे जाने से आप राजी होंगे लेकिन दुनिया तो सदा-सदा मेरी कर्जमंद रहेगी, ऋणी रहेगी कि मैं गया तो भी गोदावरी देकर गया। मैंने जगत को गोदावरी प्रदान की है। जगत को ये प्रवाहमान विचारधारा प्रदान की। ऐसी एक कथा है।

तो बाप, नियति के कारण ऐसी घटना घटी होगी। बाकी ऋषिमुनि लड़े ये मुझे राश नहीं आता। ऋषिपत्नी दावा करे कि ये जल पहले मैं ही पीउं ये भी मुझे राश नहीं आता। मुनिगण एकत्र होकर षड्यंत्र करके निकाल देने की कोशिश करे, तनिक भी अच्छा नहीं लगता। फिर वो गणेश को चढ़ाये और गणेश आ जाये वो तो जरा भी अच्छा नहीं लगता। लेकिन परमात्मा की इच्छा के अनुकूल हुआ होगा। तो, गोदावरी के बारे में भिन्न-भिन्न दर्शन हम कर रहे हैं। गोदावरी सनातन धर्म की जड़ता का प्रतीक नहीं, प्रवाहमान गति का स्वरूप है। हम भी थोड़ा प्रवाहमान बनें। युवानी प्रवाहमान होती

जा रही है ये इक्कीसवीं सदी का शगुन है। घटना तो ऐसे घटेगी किसी बुद्धपुरुष के पास बैठने से; यदि शास्त्र में रुचि है तो शास्त्र का अवलोकन करने से; संतसंग में रुचि है तो कोई संत मिल जाय, कोई फ़कीर मिल जाय उसके परिसर में बैठने से घटना घटेगी। छोड़ो यार, कोई साधु हमें देख भी ले, घटना घट जाती है!

सत्संग केवल मोरारिबापू व्यासपीठ पर बैठे और कुछ बातें करे इतना ही नहीं। आप सुनो ये तो सत्संग है ही, लेकिन सत्संग को इतना सीमित भी ना करे। सत्संग भी गतिशील और प्रवाहमान हो। आप एक अच्छा लोकगीत सुने, तुम्हारा दिल झूम जाय तो भी सत्संग बन गया। जहां से प्रसन्नता प्राप्त हो वहां सत्संग। परहेज़ क्यों?

तो, भगवद्कथा, संतों का संग हमारे अंदर कुछ प्रकट करता है। जो था, किसी कारणवश दब चुका था, उस केन्द्रीय को सक्रिय करता है। हमें और आपको भगवद्कथा से कोई केन्द्र को छुआ जाता है। बोडी के किसी केन्द्र को प्रभावित किया जाता है और इस प्रभावित करने के कारण कभी हमने जिस रसायण का अनुभव नहीं किया ऐसे रसायण प्रकट होते हैं ओर वो ही आंसू प्रदान करे देते हैं; वो ही पुलकित कर देते हैं; वो ही आंखें ड़बड़बा देते हैं।

कथा पुन्य के लिए कभी सुनो ही मत। भीख क्यों मांगते हो पुन्य की? स्वर्ग की भी भीख मत मांगो। पृथ्वी जैसा कोई स्वर्ग है ही नहीं। भारत जैसा कोई स्वर्ग है ही नहीं। कौन-सा स्वर्ग? प्रश्नचिह्न है। मेरे पास एक किताब है। दुनिया के सौ विचार का इंग्लिश का हिन्दी रूपांतर है। वाणी प्रकाशन की है। इसमें पाश्चात्य विचारक रहा उसने एक दवा खोजी जो आजकल नशे की दवा है। ऐसी एक दवा खोजी। उसने इस दवा का प्रयोग किया। अंदर एक ज्योत जलने लगी! फूल खिलने लगे! प्रसन्नता ही प्रसन्नता आने लगी! आदमी नाचने लगा! और माना अच्छा है। लेकिन उसने जो निवेदन किया वो परिपक्व मुझे नहीं लगता। उसने ये कहा कि भारत के ऋषिमुनियों को जिस चीज़ से ध्यान लगता है वो ही ध्यान अब मुझे लग रहा है! कुछ नशीले पदार्थ लेकर यदि थोड़ी देर आप मस्ती में आ जाय तो वो विपश्यना नहीं है। विपश्यना तो बुद्ध की बड़ी देन है। इसका अर्थ तो होता है देखो और कुछ दिखा दे। ओर कोई चर्चा ही नहीं वहां। तो आदमी शायद वहां भूल गया कि मैंने ध्यान की पद्धति खोजी! वो तो ऊतरनेवाली मस्ती है और परमात्मा की मस्ती तो अखंड है। तो अखंड मस्ती तभी आती है जीवन में कि किसी बुद्धपुरुष का सान्निध्य हमारे उसी केन्द्र को प्रभावित करे जो हम सबमें होता है। किसी की दृष्टि, किसी की बोली, किसी का होना इस केन्द्र को प्रभावित करेगा। आजकल भगवद्कथा का बाहुल्य क्यों है? श्रीमद् भागवत हो, रामकथा हो, उपनिषद् की चर्चा हो, संगीत हो, संतवाणी हो, कोई भी हो। मेरी ये महसूसी है। मैं तो लोकसंगीत सुनूं तो भी भर जाता हूं। क्योंकि मुझे पता है, कुछ बातें केन्द्र को छूती है।

तो मेरे भाई-बहन, यह प्रवाहमय चेतना को कोई टच करता है, शास्त्रों के द्वारा, संतसंग के द्वारा, अपनी साधना के द्वारा। इससे हमारा प्रवाह अखंड रहता है तैलधारावत्। जिसको योगी की बोली में सहस्रधारा कहते हैं। हमें और आपको पता ही नहीं कि हमारे अंदर केवल श्रावण मास में ही अभिषेक नहीं हो रहा है। किसी के द्वारा रसवर्षा का अखंड अभिषेक हो रहा है। लेकिन इस बिंदु को हम पकड़ नहीं पाते! क्यों हम साधु-संतों की ऊंगली हमारे सिर घुमाना चाहते हैं? मेरे गोस्वामीजी ने तो अपने दर्शन में लिखा है -

जब द्रवै दीनदयालु राघव, साधु-संगति पाइये।

जेहि दरस-परस-समागमादिक पापरासि नसाइये।।

कोई साधु कब मिलता है? कोई बुद्धपुरुष किसी भी वेश में हो, उसका एक मात्र कारण गोस्वामीजी के दर्शन में है, कोई साधु मिल जाय तो समझना, मेरे ठाकुर मेरे पर कृपावंत हो चुके है। वो द्रवीभूत हो चुके है। जिसके दर्शन से, जिसके स्पर्श से, जिसके समागम से पापराशि नशायेगी। जिसके कारण हमारी अंदर की गोदावरी

प्रवाहमान है। जिसकी चेतनायें घूमती होगी जो हमारे केन्द्र को सक्रिय करती रहती है। प्रभु से प्रार्थना करनी चाहिए, ऐसी कोई चेतना हमें टच करे। ये हृदय की पारदर्शिता तभी फूट आती है जब ओलरेडी हम में कुछ है।

ओशो ने कभी कहा कि बिलकुल खाली हो जाव तब घटना घटेगी। ये अच्छा सूत्र है। बुद्ध के शून्यवाद का ये अर्थ है। लेकिन भक्तिमारग में, 'रामायण' के प्रवाह में तो हम ये सीखे हैं कि पूरा रिक्त मत होओ। तुम्हारे में कुछ है उनको रहने दो। सौराष्ट्र के वैष्नव साधु, हम तांबडी लेकर लोट लेने जाते थे। साधु जाकर कहता था, 'भज ले राम।' ब्राह्मण जाकर कहता था, 'दया प्रभुनी।' ये शब्द निकलते थे। मुझे ये सद्कर्म का एक-दो बार मौका मिला था। तब माँ कहती थी, बेटा, तांबडी लेकर दूसरे के घर जाओ तब पहले घर के लोट की मुठ्ठी एक अंदर डाल दे। ये नियम था। फिर जब निकलते थे साहब, तो तांबडी में समा न सके इतना लोट आता! कुछ तो तांबडी में होना चाहिए। ओशो ने कहा, रिक्त हो जाओ। तथागत का ये शून्यवाद है। लेकिन प्रेमधारा में, कृष्ण की धारा में, शिव उपासना की धारा में, रामभजन की धारा में तो कुछ होना चाहिए। भक्ति में तांबडी खाली नहीं होनी चाहिए, अपने घर की एक मुठ्ठी आटे की आवश्यकता है। प्रभु की कथा, भगवत्चर्चा हमारी तांबडी को भर दे। लेकिन कुछ तो अपने में थोड़ा होना जरूरी है।

मैं जब मेट्रिक में था तब कविवर टागोर की एक कृति पढ़ाई जाती थी। एक भिखारी भिख मांगने के लिए निकलता है। शायद टागोर इस पद्धति जानते थे। तो, उस भिखारी की पत्नी अपने पति से कहती है कि आप भिख मांगने जा रहे है तो अपनी जोली में एक मुठ्ठी चावल अपने घर की डालके जाओ। तो पत्नी ने अपनी पति की जोली में वो चावल डाल दी। फिर निकला। जैसे घर से बाहर निकला ऐसे मूल मारग पर कदम रखा कि राजा की सवारी निकली, भिखारी खुश हो गया कि कौन शगुन लेकर निकला कि राजा सामने आ गया, आज मेरी जोली भर जाएगी। आज जो चाहूं वो मुझे मिलेगा।

राजा अपनी सवारी से नीचे ऊतरा और पहला आदमी मिला। उसको प्रणाम करता है। भिखारी स्तंभित हो गया। राजा ने कहा, तेरी जोली में जो हो उसमें से कुछ मेरी जोली में डाल दे। राजा ने कहा, कल सायंकाल एक पंडित ने मुझे बताया कि वर्षा नहीं हो रही है। देश मुश्किल में है। मैंने पूछा, वर्षा कैसे हो? तो पंडितो ने बताया कि कल सुबह निकलो और जो पहला आदमी मिले उसकी जोली से जो मिले वो एक कण भी तुम ले लो और इस कण लेकर घर पहुंचोगे और वर्षा हो जायेगी। तो दाता, तू मुझे कुछ दे, मैं भीख मांग रहा हूं। अब जिंदगीभर भिखारनपना था तो थोड़ी संकीर्णता भी थी। राजा को मना भी कैसे करे? तो अपनी जोली में से उसने चावल का एक दाना बा-मुश्किल राजा की जोली में दिया। राजा ने प्रणाम किया, बस, मेरे राष्ट्र का काम बन गया। फिर वर्षा हुई। आज भिखारी को आधे दिन में बहुत भिक्षा मिली। लेकिन उसकी उदासीनता बरकरार रही कि राजा ने मुझसे मांगा और मुझे देना पड़ा! घर आया। पत्नी ने उदासीनता का कारण पूछा। कहा, राजा मिला और वो भी मांगने निकला! मेरे से मांगा! मैंने तो एक दाना दिया। इतने में भिखारी की पत्नी ने भिखारी की जोली को ऊल्टी करके चावल गिराये कि चावल नीचे गिरे। देखा, एक दाना सोने का था! जो देते हो वो ही सोना होता है, जो सिमटते हो वो मिट्टी बन जाता है। एक दाना सोने का हो गया! तब भिखारी रोने लगा कि मैंने पूरी मुठ्ठी दे दी होती तो? लेकिन चिड़ियां चुग गई खेत! अवसर चूक्या मेहुला!

हमारे पास मुठ्ठी श्रद्धा होनी चाहिए। एक चपटी विश्वास होना चाहिए और 'भगवद्गीता' में लिखा है, स्वल्प से स्वल्प भी पास कुछ होगा तो 'त्रायते महतो भयात्।' तुम बहुत विभिषीका से बच जाओगे। स्वल्प से स्वल्प धर्म भी तुम्हें तार देगा। तुम्हें धन्यधन्य कर देगा। तो कोई न कोई चेतना जब छूती है तब हमारा हृदय विशेष पवित्र होने लगता है। और ये विशेष पवित्रता तभी प्रफुल्लित होने लगती है कि अंदर कुछ ना कुछ शुभ पड़ा है। माँ-बाप की खानदानी के कुछ चावल ओलरेडी हमारे में है। हमारे कोई गुरु-सद्गुरु के कुछ चावल के दाने हमारे जीवन में है। वो ही हमारी जोली भर देता है। मैं मेरे श्रोताओं को कहूं कि जीवन में कोई भी घटना घटे तो समझना, परमात्मा एडवान्स में पोलियो पिला रहे हैं। हल्के-फूल्के सरल-तरल हो जाओगे। अनुभव कहता है इसलिए बोलता हूं। 'मानस' यही रसी का काम करता है। एडवान्स पोलियो मिलता है। एडवान्स शीतला की रसी पिलाती है कि हमारी भीतरी खूबसूरती को कोई बदसूरत ना कर दे।

तो बाप, परमात्मा एडवान्स में हमें सावधान कर देते हैं। रावण जानकी को अशोकवाटिका में डराने-धमकाने अथवा तो उसकी दृष्टि पाने के लिए आता है। रावण आया उसके पहले हनुमानजी आ चुके हैं। एक हमारे श्रोता से सुना। उसने कहा, इसका मतलब तो यही होना चाहिए की जीवन में समस्या आती है इससे पहले परमात्मा समाधान भेज देता है। थोड़ा धैर्यकंथा। रावण विश्व की सबसे बड़ी समस्या थी, लेकिन इससे पहले हनुमान बैठा था।

हमारे भारत के प्रत्येक ग्रंथों की ये शक्ति है। जीवन जीने में 'मानस' ने बहुत मदद की। 'गुरुग्रंथसाहब' ले लो। इसरदास बापू; ए बहु पी गयेलो माणस! कितनी राम की महिमा का उसने गायन किया! 'हरिरस' का तो पारायण होना चाहिए। 'ज्ञानेश्वरी', इसका तो पारायण बहुत होता है। अद्भुत है, 'ज्ञानेश्वरी;' तुकाराम। पारायण करने और पारायण होने के ग्रंथ है।

भगवान राम-लक्ष्मण मुनि के संग मिथिला में है। विश्वामित्रजी से कहते हैं, नाथ, लक्ष्मण नगर-दर्शन करना चाहता है। मैं साथ में जाकर दिखा के आउं? फिर नगर-दर्शन के लिए जाते हैं। पूरी मिथिला राम के रूप में डूब जाती है! संध्या का समय हुआ। लक्ष्मण को लेकर रामजी लौटे। संध्यावंदन किया। विश्राम किया। सुबह गुरु की पूजा के लिए राम-लक्ष्मण फूल चुनने जनक की वाटिका में जाते हैं। बड़ा प्यारा प्रसंग है। उसी समय सुनयनाजी अपनी बेटी जानकी को सखियों के साथ गौरीपूजा के लिए वाटिका में भेजती है। जानकीजी सखियों के साथ बाग में आती है। सरोवर में स्नान करके गौरी के मंदिर में आती है। अनुराग से पूजा की और अपने अनुरूप वरदान मांगा। उसी समय सीया की सखियों में से एक सखी जो बाग देखने में पीछे रह गई थी वो राम को देख लेती है। रामदर्शन के बाद वो भाव में डूब गई! वो दौड़कर आती है, जानकी से कहती है चलो, जिस राम के बारे में तुम जिज्ञासा कर रही थी वो आज बाग में घूम रहे हैं। इस सखी को आगे करके जानकी चलती है, इसका मतलब ये है कि बुद्धपुरुष आगे होना चाहिए। हम उसके कदमों पर चलें। हम श्रद्धा से अनुगमन करे। राम के दर्शन

परंपरा प्रवाही होनी चाहिए। कट्टर और जड़ नहीं। कोई भी नदी की धारा प्रवाहमान ही होती है। गोदावरी सनातन धर्म की प्रवाहित सरल-तरल धारा है। सभ्यता और संस्कृति प्रवाहमान होनी चाहिए। यदि वो कट्टर हो जाय, जड़ हो जाय तो संस्कृति का पोत कमजोर हो जाता है। और तथाकथित कई सभ्यतायें, तथाकथित कई धर्मधारायें शताब्दियां बीत गई फिर भी अपनी जड़ता और कट्टरता न छोड़ पाई! और हमारी सभ्यता वैश्विक धारा है। मैं किसी का नाम न लूं, लेकिन कई तथाकथित धर्मधारायें जड़ और कट्टर है! गोदावरी का बहुत तात्त्विक अर्थ यही है कि ये प्रवाहमान है। धर्म जब जड़ हो जाता है, तब हिंसा करता है, बेईमानी करता है। परंपरा जड़ नहीं होनी चाहिए, प्रवाही होनी चाहिए।

से पहले जानकी में पांच-पांच दृष्टि प्रकट हुई है। कुछ बातें 'मानस' में परोक्ष है। कुछ बातें अपरोक्ष है। इसलिए शास्त्र को आत्मसात् करने के लिए गुरु जैसे कोई बुद्धपुरुष की शरण बहुत आवश्यक है। गोस्वामीजी कहते हैं, साधु का लक्षण मधुकर के समान होना चाहिए। वो जहां से रस प्राप्त हो, ले ले। ये गोदावरी का प्रवाह हमें यही शिक्षा देता है। तो बाप, पांच दृष्टि से अवलोकन किया गया। पहली दृष्टि सीता की -

चितवति चकित चहूँ दिसि सीता।

चकित दृष्टि। अब दूसरी दृष्टि -

कहँ गए नृपकिसोर मनु चिंता।

कहां गये? मेरे गुरु ने तो कहा, बाग में होगा। मेरा गुरु झूठा नहीं होता। तो, जानकी को चिंता होने लगी। तो दूसरी दृष्टि है चिंतित दृष्टि। कहीं फूल लेकर लौट तो नहीं गये! चिंता होने लगी। अब तीसरी दृष्टि -

जहँ बिलोक मृग सावक नैनी।

डगर तो वही है। कहां है! किसी स्त्री की सुंदर आंख का वर्णन करना है तो मृगनयनी कहते हैं। सावकनयनी, हिरन का बच्चा। मृगसावक नयनी ये तीसरी दृष्टि। उस मारग पर देख रही है।

जनु तहँ बरिस कमल सित श्रेनी।।

जानकीजी भावपुष्प चढ़ा रही है। कमल के फूल बिछा रही है। कमल के फूल का रंग श्वेत बताया। यही डगर पर राघव मिले। श्वेत रंगीन कमल। उसका अर्थ है सात्त्विक दृष्टि। सौम्य दृष्टि। शीतदृष्टि। कमल का अर्थ है असंग दृष्टि। अब राम को देख लेती है। चौथी दृष्टि आई -

देखि रूप लोचन ललचाने।

राम का रूप देखते ही नेत्र लालची हो गये! लोभी दृष्टि आयी। लोभ की कोई सीमा नहीं।

हरषे जनु निज निधि पहिचाने।।

ये तो मेरा खजाना है! और फिर पांचवीं दृष्टि होती है -

लोचन मग रामहि उर आनी।

लोचन संग जानकी हृदय में राम को ऊतारती है। ये आंतर्दृष्टि है, भीतरी दृष्टि है। सियाजु ने अपने नेत्र के द्वार बंद कर दिये, क्योंकि मेरी निजनिधि को कोई देख न ले और उसको कोई लूंट भी ना ले। पुष्पवाटिका में राम को देखने की मेरे गोस्वामीजी ने पांच दृष्टि का सर्जन किया है। 'मानस' की कृपा से अल्लाह करे, हमें ये दृष्टि प्रदान हो। पहली चकित दृष्टि, दूसरी चिंतित दृष्टि, तीसरी सौम्य दृष्टि, चौथी लोभ की दृष्टि, पांचवीं दृष्टि अंतर्मुख हो जाना। जानकी अंतर्मुख होकर राम में डूबी है तब सखी कहती है चलो, विलंब हो रहा है, घर चलो। कल फिर आयेंगे। पीछे मुड़कर जानकी बार-बार राम का दर्शन कर लेती है। फिर भवानी के मंदिर में जाकर गौरी की स्तुति करती है। माँ बोली, मुस्कुराई। अपने गले की माला स्वयं जानकी को दी, आशीर्वाद भी दिया। और आशीर्वाद प्राप्त करके जानकी घर लौटती है।

राम-लक्ष्मण विश्वामित्रजी के पास आये। पूजा हुई। चरणसेवा, गुरुसेवा संपन्न हुई। दूसरे दिन धनुषयज्ञ का दिन था। राम-लक्ष्मण मुनिगणों के साथ आते हैं। कोई धनुष नहीं तोड़ सका और राम ने क्षण के मध्यभाग में धनुष तोड़ दिया! धनुष टूटा। जानकीजी ने जयमाला पहनाई। जयजयकार हुआ। बाबा परशुरामजी आये। जयजयकार करके बाबा परशुरामजी चले गये। फिर दूतों को अयोध्या भेजा। महाराज दशरथजी बारात लेकर मिथिला आये। सीता-राम का ब्याह होता है। राम-जानकी की तरह तीनों भाईयों का ब्याह होता है। बहुत दिन बारात रुकती है। कन्याविदाय हुई। रास्ते में मुकाम करते-करते ये बारात कन्याओं को लेकर पुत्रवधूओं को लेकर अवध पहुंचती है। माता ने आरती की। शगुन हुए। सब विधियां हुई। कुछ दिन बीते। महेमानगण विदा होने लगे। आखिर में विश्वामित्रजी की विदाय का प्रसंग। पूरा परिवार खड़ा है -

नाथ सकल संपदा तुम्हारी।
मैं सेवकु समेत सुत नारी।।

'हे महर्षि, आपको जब साधना से समय मिले, हमें दर्शन देते रहियो।' विश्वामित्रजी विदा हुए। 'बालकांड' पूरा हुआ।

मानस-गोदावरी : ९

'रामचरित मानस' ने प्रत्येक इन्द्रिय को दीक्षित की है

'मानस' के आधार पर देखें तो कैलास बहुत ऊंचाई पर है, इससे ऊंचा कुछ नहीं है श्रद्धाजगत में। वहां वटवृक्ष है और आप जानते हैं कि वेदविदित वट है। वेदों के द्वारा प्रसिद्ध वटवृक्ष कैलास पर है। और उस कैलास की छाया में बैठकर भगवान रामकथा कहते हैं। तीर्थराज प्रयाग में भी एक वट है। जिसका नाम अक्षयवट है। और कहते हैं कि प्रयाग के अक्षयवट की छाया में निरंतर कथा चलती है और सुनाते रहते हैं। संतों ने कहा कि प्रयाग में रहा ये वट उसका नाम अक्षयवट है। कैलास का वट विश्वास का वट है। शृंगबेरपुर में भी वट है, गंगा के तट पर जहां प्रभु ने विश्राम किया है और वहीं से क्षीर लेकर प्रभु ने उदासीन व्रत के अनुकूल जटाबंधन किया है। चित्रकूट में भी वट है, जहां भी कथा होती रहती है। पंचवटी में गोदावरी के तट पर वट है। काभभुशुंडि के आश्रम में नीलगिरि में भी उपासना करने के लिए जिन वृक्षों का चुनाव किया गया है, उसमें वटवृक्ष का चुनाव है। और वटवृक्ष की छाया में वहां भुशुंडिजी स्वयं कथागायन करते हैं।

गोदावरी की विशेषता ये है कि ये सभी स्थान निर्देश यहां हुआ वहां एक-एक वट है। और करीब-करीब उन एक-एक वट के नीचे कथा का ही संभव होता है। और तात्त्विक दृष्टि से ये भी अच्छा लगता है कि वट के नीचे ही कथा हो; क्योंकि वट विश्वास का प्रतीक है, ध्रुवता का प्रतीक है। इसलिए कथा तो विश्वास की छाया में ही होनी चाहिए। संशय और संदेह की छाया में तो कथा कथा नहीं रहती, व्यथा निर्मित करती है। वटवृक्ष का चुनाव बड़ा आध्यात्मिक है। एक तो विश्वास की छाया में। दूसरा तुलसीदासजी ने विश्वास की व्याख्या करते हुए 'मानस' में लिखा है, ध्रुवविश्वास। उत्तर दिशा में ध्रुव तारे को देखकर हम दिशा निर्देशन प्राप्त करते हैं। दिशा का मार्गदर्शन प्राप्त

करते हैं। तो ये भी अचलता का प्रतीक है। ध्रुव का तारा इधर-उधर नहीं होता। और अचलता का प्रतीक मानी अचल विश्वास का संकेत है। अक्षयवट का सीधा-सादा अर्थ है कि उसका क्षय नहीं होता, इसका नाश नहीं होता। घटना घटी कि नहीं, लेकिन मैंने सुनी जरूर कि प्रयाग में जो अक्षयवट है; अंग्रेजों को लगा कि यहां इतना बड़ा बारह साल में कुंभ होता है और पूरा देश इकठ्ठा होता है। तो इसको थोड़ी जलन हुई तो कहते हैं, उसको निर्मूल करने के लिए तेजाब डाला जाता था अक्षयवृक्ष के जड़ों में लेकिन फिर कोंपलें निकलती रहती थी। उसको मिटाया नहीं गया। भुशुंडिवाला वृक्ष तो दूर है। कैलास का वट भी अदृश्य है।

तो, वट का वृक्ष कभी हमारी पात्रता सिद्ध करता है। साधक की अचलता की ओर इंगित करता है वट का वृक्ष। ये भजन हम करेंगे तो हमारा क्षय नहीं होगा। ये वट का वृक्ष हमारी जो भी दिशा दी हो इस दिशा में परमात्मा ने हमें जो दशा या दिशा हो उसमें हमारी स्थिरता हम नहीं चुकेंगे। ये भी वटवृक्ष का किसी न किसी रूप में तात्त्विक संकेत है।

मुझे मूल ये कहना है बाप कि सब जगह एक-एक वटवृक्ष है, लेकिन गोदावरी के तट पर जहां कथा चल रही है वहां पांच वट है। इसलिए हम इस भूमि को पंचवटी कहते हैं। पांच-पांच के अंक की पंचवटी में बड़ी भूरीश: प्रसिद्धि और स्थापना है। वटी औषधि के रूप में इंगित की जाती है। जैसे हम कहते हैं खदिरादिवटी, त्रिभुवनवटी ऐसे। ग्रंथों में भी एक वटी का नाम है व्यासवटी। अभी-अभी रामकथा के एक श्रोता, जूनागढ में छोटा-बड़ा आयुर्वेद का डोक्टर है उसने एक औषधिवटी निर्मित की है। फिर मेरे पास आये। बोले, कुछ विशेष प्रयोग करके ये वटी बनाई है। उसने मुझे वटी बताई। बोले, बापू, उसका उपयोग करे। मैंने कहा, किस दर्द पर? बोले, कोई दर्द की जरूरत नहीं। ये वटी में मैंने थोड़ा खदिरादिवटी का वो रखा है। फिर जेठीमध, फिर थोड़े तज-लविंग डाले हैं। जैसे कफ़ तोड़ने के लिए देशी औषधि मिलाकर गुटी बनाई। मुझे दी। मैंने ट्राय किया तो अच्छा लगा। स्वाद भी अच्छा लगा। फिर उसने कहा, मैं ये वटी का नाम क्या रखूं? मैंने उसको कहा, भुशुंडिवटी रख। तो उसने भुशुंडिवटी रखा। कोई लेबल नहीं है। नि:शुल्क देता है। तो एक भुशुंडिवटी वहां बनी। एक वटी का नाम पृथुवटी है। मैं उसकी खोज ज्यादा नहीं कर पाया, लेकिन शायद वो 'श्रीमद् भागवत' में पृथु का जो व्याख्यान है उसके आधार पर बनायी गई हो और इस वटी का परिणाम ये बताया जाता है कि इस वटी का फल यही है कि हरि के चरण में निष्ठा बने। ये मुझे अच्छा लगा। त्रिभुवनवटी का मैं साक्षी हूं। व्यासवटी के बारे में सुना है। खदिरादिवटी मैं रोज रखता हूं।

पांच प्रकार की वटी है। मैं सोचता हूं, ये पांचों प्रकार की वटी गोदावरी के तट पर पंचवटी में है आध्यात्मिक दृष्टि से पंचवटी के प्रदेश में। ये केवल यहां चूसने की बात नहीं है। यहां बैठने से भी कोई त्रिभुवन गुरु जैसा समर्थ शिवतत्त्व है उनकी चेतना का अनुभव हो सकता है। ये एक वटी ये काम करे। दूसरी वटी यहां कोई आदमी गोदावरी के तट पर बैठकर साधना करे तो आदमी को कफ़ मिटेगा। आध्यात्मिक दृष्टि में तुलसीजी ने लोभ को कफ़ कहा है -

काम बात कफ लोभ अपारा।
क्रोध पित्त निज छाती जारा।।

अपार इच्छायें, अपार लोभ उसको आध्यात्मिक अर्थ में गोस्वामीजी कफ़ की संज्ञा देते हैं। तो पंचवटी पर, गोदावरी के तट पर कोई समय मिले रहे, साधन करे तो लोभ की मात्रा कम होती है। व्यासवटी है वो वट के द्वारा आदमी थोड़ा ग्रंथियों से मुक्त होकर उदार बन सकता है। हमारी छोटी-बड़ी ग्रंथियां, छोटे-बड़े आग्रह, छोटे-बड़े हेतु इनसे आदमी आगे निकल सकता है। तीर्थों का शास्त्रीय अर्थ ये है कि आप पवित्र हो। आपकी श्रद्धा है। इमरोझ का एक वाक्य है कि गंगा जिस्म पवित्र कर

सकती है, सोच नहीं। आदमी की विचारधारा, अनेक प्रकार के द्वेष-क्रोध आदि-आदि, उनको मिटाना मुश्किल है। बिगड़ा जिस्म नहीं है, सोच है। व्यासवटी का ये फल होना चाहिए कि हमारा औदार्य बने। हमारी ग्रंथियां छूटे। एक दूसरे के प्रति क्रोध-द्वेष छूटे। लोभ से मुक्त होना है; संकीर्णता से मुक्त होना है; विश्वास को बढ़ाना है; कई प्रकार की बीमारियों को ठीक करना है। तो यहां पांच वट है। गोस्वामीजी ने तो लिखा है, राम-लक्ष्मण-जानकी जिस पंचवटी में विराजते हैं तो वहां तो सभी को सब प्रकार के मंगल का दान किया जाता है।

हमारे यहां दो शब्द है, 'सान्निध्य' और 'सामीप्य।' लोक कहते हैं, हमारे गुरु का थोड़ा सामीप्य मिले, निकटता मिले। और कहते हैं, हमें उनका दो महिने सान्निध्य भी मिला। एक बार मेरे पास प्रश्न आया था कि सान्निध्य और सामीप्य में अंतर क्या है? सामीप्य उनको कहते हैं कि आप उसके पास जाये, समीप जाये, उसके साथ घंटे-दो घंटे बैठे, कुछ दिन रहे, महिना रहे। फिर आप कहे कि हमको फलां बुद्धपुरुष का सामीप्य प्राप्त हुआ। हम वहां गये। सान्निध्य उसको कहते हैं कि हम नहीं गये, वो हमारे पास आकर महिना रुके। आप स्नान करते हैं तब कहते हैं -

गंगे च, यमुने च गोदावरी सरस्वती।

वो सभी नदियों का नाम लेकर हम स्नान करते हैं। और आखिर में क्या कहते हैं, 'जलेस्मिन् संनिधिम् कुरु।' नहाते समय गंगा को, यमुना को, सब को याद करते भारत का भावजगत कहता हैं ये सभी नदियां मेरी बालदी में जो जल है, उसमें संनिधि करो। आप यहां आकर अंदर आ जाओ। सान्निध्य का अर्थ है, वो हम में आ जाय। सामीप्य का अर्थ है हम उसके पास जाकर मर्यादा से दूरी पर बैठे। और सान्निध्य का अर्थ है वो हमारे अंदर ऊतर जाय। मैं तो हनुमानजी से प्रार्थना भी करूं, हम इस कथा के बाद यहां से जाये तो गोदावरी को छोड़कर ना जाये। हम आये थे तो सामीप्य मिला था। अब जाये तो चाहो, गोदावरी का सान्निध्य मिले। गोदावरी हममें आये।

गोदावरी का एक-एक शब्द का अर्थ करे तो 'गो' मानी इन्द्रियां। अंत:करण चतुष्टय मिला दो तो चौदह इन्द्रियां। दश बहिर् चार अंदर। 'दा' का अर्थ है दातारी। दातारी का अर्थ है उदारता। किसके सामने दातार होना है? तो मेरे ढंग से इसकी व्याख्या करूं तो मेरे युवान भाई-बहन, ये दातारी साधक को अपनी इन्द्रियों पर करनी है। अपनी इन्द्रियों पर उदार होना है। अपनी इन्द्रियों के साथ दगा नहीं करना है। हमें सिखाया गया है कि इन्द्रियों को दबाओ! ये इन्द्रियों पर उदारता नहीं है। तो बाप, इन्द्रियों का शोषण ना करे। इन्द्रियों को काटे ना, कष्ट ना दे। 'भागवतजी' ने और 'रामचरित मानस' ने प्रत्येक इन्द्रिय को दीक्षित किया है। कान है तो आनंद आये ऐसा सुन। जीभ से अच्छे बोल। कष्ट मत दो। किसी स्त्री को देखो और आंखें फ़ोड़ डालो! आंख फ़ोड़ने से स्त्री अंदर से चली जायेगी क्या?

हमारे यहां एक कथा बडी प्रसिद्ध है कि गुरु और चेला जा रहा था और इन दोनों में स्त्री से बात करना मना, स्त्री को देखना भी मना। दोनों जा रहे थे। नदी को पार करके दूसरे गांव जाना था। वर्षाऋतु थी। बाढ आई थी तो कैसे जाये? एक बूढी माँ थी तो उसने कहा, मैं तो यहां रह जाउंगी, लेकिन युवान स्त्री है उनका बेटा उधर है, उसको कैसे पहुंचाये? और कहते हैं कि बाबा तो तैरके पानी से निकल गया। वो बहन रो रही है। युवक को करुणा आ गई। यद्यपि स्त्री को छूना मना था। उस युवक साधु ने क्रांति की और ये युवान स्त्री को कंधे पर बिठा दिया और पानी से निकलकर सामने तट पर रख दी। बहन ने कहा, आपका बहुत शुक्रिया। आपने मेरी जान बचाई। मेरे बच्चें मुझे मिल जायेंगे। अब गुरु-चेला आगे चलने लगे तो बूढ़ा गुरु था वो शिष्य को ताना ही मारे कि तूने धर्म भ्रष्ट कर दिया! हमारे धर्म की परंपरा तोड़ दी! तूने कंधे पर स्त्री रखी! सत्यानाश कर दिया धर्म का! एक ही बात वो डांटता ही रहा तब चेले ने कहा कि गुरुजी, मैंने तो नदी के उस तट से इस तट तक स्त्री को कंधे पर रखी थी और ऊतार दी। मैं तो भूल भी गया, लेकिन आप

तो पांच किलोमिटर अभी उठाये जा रहे हैं! अभी भी वो लड़की तुम्हारे दिमाग से ऊतरी नहीं! मैंने तो छोड़ दी। कौन होगी, क्या पता? और तुम इसी की सोच में हो!

मज़ा देखा मियां सच बोलने का?

जिधर तू है उधर कोई नहीं!

सब दूसरी दिशा में बैठे हैं! तो ये स्वाभाविक है।

कुछ तो लोग कहेंगे, लोगों का काम है कहना।

छोड़ो बेकार की बातें कहीं बीत ना जाय रैना।

सीता भी यहां बदनाम हुई। जानकीजी को यहां बदनाम किया गया है। इन्द्रियों के प्रति उदार रहना। हां, बुद्ध ने कहा है, सम्यक् रहना। उसकी मात्रा का ध्यान रखना। और कई लोग तो माताजी को मानते नहीं! तो तू कहां से आया? और युवान भाई-बहन को ऐसी विचारधारा जहां हो वहां विवेक से पूछना चाहिए कि ये क्या है? धर्म के टुकड़े-टुकड़े ना हो। जहां सत्य है, जहां प्रेम है, जहां करुणा है सब अपने हैं। हम उनके हैं। तो बाप, लोगों को दबा रखा है परंपराओं ने, माता-पिता ने, बुज़ुर्गों ने। इनसे विवेक से बाहर आना चाहिए। एक समय था कि लोग साधना करने के लिए खीले पर चलते थे! लहुलुहाण होते थे! कई महात्मा सूलों की सैया पर सोते थे! ये कोई काल में होगा। ये ईक्कीसवीं सदी है। साधना ऐसी हो, देखनेवालों को बीभत्स ना लगे।

उज्जैन में भोग कितने प्रसिद्ध है! वहां लोग शराब चढ़ाते हैं! हम भी गये दर्शन को। थोड़ी जिज्ञासा की कि होता क्या है? तो बड़े दर्शनीय पूजारी बैठे थे। क्या किमिया किया जाता है कि मूर्ति के मुख पर रखने से आधी बोटल मूर्ति खाली कर देती है, फिर जो बचती है वो प्रसाद के रूप में पूजारी बांटता है! मुझे कहा, बापू, प्रसाद? मैंने कहा, तू पी! मैं ये नहीं पी सकता। तो ये सब जो है वो ईक्कीसवीं सदी में ठीक नहीं है। और मैंने कई तांत्रिकों को देखा है और तांत्रिकों का अंत भी देखा है। भयंकर! अल्लाह करे, ऐसा अंत किसीका ना हो। तुलसी कहते हैं, आखिर में उसका निर्वाह नहीं होता।

शरीर को तोड़ ना दो। शरीर परमात्मा के भजन का सर्वश्रेष्ठ साधन है, देवदुर्लभ साधन है। फिर तीसरा अक्षर गोदावरी का 'व'। 'व' का अर्थ है गोदावरी वर्गभेद, वर्णभेद नहीं करती। गोदावरी ये नहीं कहेगी कि दलित स्नान न करे, ब्राह्मण ही करे। ये नहीं कहेगी कि संन्यासी ही स्नान करे। गोदावरी वर्ण-वर्गमुक्त है। मेरे क्षेत्र में फसल पके, दूसरे में ना पके; गोदावरी उसकी फसल नहीं पकायेगी? यदि गोदावरी के तात्त्विक सूत्रों को हमारे घर में हम बसाये तो घर पंचवटी बन सकता है। यद्यपि पंचभूत का शरीर ओलरेडी तात्त्विक रूप में पंचवटी है ही। 'री' का अर्थ है, दूसरों को प्रसन्न करने का ही संदेश देती है। नदी का स्वभाव है दूसरों को प्रसन्न करना। और दूसरा प्रसन्न हो जाय इसका मतलब ये कि उनके पाप खत्म हो गये, क्योंकि अंदर पाप है तब तक हम प्रसन्न नहीं हो सकते। तो, गोदावरी के चार अक्षर के कुछ ऐसे तात्त्विक अर्थ भी मैंने सुने। आपके पास प्रस्तुत किए। हमें रोज़ राजी रखे ऐसी गोदावरी।

पंचवटी में पांच प्रसंग की भी प्रधानता है। राम का लक्ष्मण को उपदेश। दूसरा शूर्पणखावाला प्रसंग। खर-दूषण का तीसरा प्रसंग। मारीचवध का चौथा और जानकी के अपहरण की कथा ये पांचवां प्रसंग। मारीच परमात्मा का परमप्रेमी मृत्यु स्वीकार करने के लिए रावण के साथ आता है। पंचवटी के अगल-बगल में हिरन के रूप में कूद रहा है। लक्ष्मणजी फल-फूल लेने गये हैं। रामजी ने सीताजी के साथ योजना बनाई कि अब मैं ललित नरलीला करने जा रहा हूं। आप अग्नि में समा जाओ, आपका प्रतिबिंब मेरे पास रखो। प्रभु के चरणकमलों को हृदय में स्थापित करती हुई जानकी अग्नि में समा गई। छायारूप वहां रख दिया गया। लक्ष्मण जैसा परमजाग्रत पुरुष भी जानकी को नहीं पहचान सका कि ये सच्ची जानकी है कि ये प्रतिबिंब है?

तो बाप, योजना बनती है। मृग छलांग लगा रहा है और जानकी निवेदन कर रही है, 'मृग की चमड़ी बहुत सुंदर है। भगवन्, इस मृग का वध करके मुझे उसका चमड़ा ला दो।' सीता जगत की माँ है और माँ होने के नाते ये मृग की भी माँ है। और माँ अपने जीव को मार दिया जाय और वो हत्या का काम अपने पति को सौंपे कि इसको मार दो! सम्यक् विचार में बैठनेवाली बात नहीं! लेकिन लीला थी, बात ओर है। और नारी स्वभाव चलो मान लिया, तो राम ऐसे सामान्य आदमी थे कि पत्नी कहे, मुझे इसको मारकर चमड़ा ले आओ तो सीधा राम दौड़े!

परमात्मा को एक परमप्रेमी का निर्वाण करना था। एक परमप्रेमी को दर्शन देना था। लक्ष्मणजी को सीता की रखेवाली करना कहते हैं। भगवान राम मृग के पीछे दौड़ते हैं। मृग का मुख राम की ओर है। चेहरा पीछे रखता है। भागा जा रहा है। भगवान को बहुत दूरी पर लेता जा रहा है। और भगवान सरसंधान करके दौड़े जा रहा हैं। बहुत दूर ले गया। भगवान को भी अवकाश देना था कि मैं पंचवटी से इतने दूर चला जाऊं ताकि मैं यहां से वापस लौटूं इससे पूर्व रावण जानकी का अपहरण ठीक से कर सके। सब योजना ठाकुर की। बहुत दूरी के बाद प्रभु ने तीर मारा है। मारीच 'राम' करके गिरा है। और सिखा गया था कि गिरते समय 'हे लखन, हे लखन', ऐसा कुछ बोलना। 'हे लखन, हे लखन', आवाज़ पंचवटी में सुनाई दी। जानकीजी को लगा, राघवेन्द्र मुश्किल में है। लक्ष्मणजी को कहा, आपके भाई संकट में पड़े हुए लगते हैं, जल्दी जाईए। लक्ष्मणजी ने कहा, मेरे प्रभु कभी संकट में नहीं हो सकते। सीताजी ने कहा, ये समय वार्तालाप करने का नहीं है, आप जाइए। लक्ष्मणजी विनय से बात करते हैं, लेकिन जानकीजी जरा कुपित होती है, मर्मवचन कहती है। माया बुलवा गई। एक प्रकार की मूढता जब होती है, आदमी को पता नहीं लगता। जानकीजी बहुत कटु वाक्य बोली है। फिर लक्ष्मणजी ने देवताओं को जानकी की सुरक्षा सौंपी है। एक रेखा बनाई। माँ से कहा, माँ मैं जा तो रहा हूं, मेरे प्रभु की आज्ञा का तो अनादर है। आप कहती है तो मैं जा रहा हूं, लेकिन ये रेखा अंकित करके जा रहा हूं।

यहां मृग को निर्वाण देकर प्रभु लौटते हैं। बीच में लक्ष्मण से भेंट होती है। भगवान ने पूछा, तू सीता को अकेली छोड़कर आया? मेरी आत्मा कहती है, सीता आश्रम में नहीं होगी! लक्ष्मण के पास कोई जवाब नहीं था। दोनों भाई आते हैं। इस शून्यता के बीच रावण जति के वेश में आता है। जानकीजी फल-फूल लेकर आती है। मर्यादा में खड़ी रही। रावण की भावभंगिमा देखकर जानकीजी को लगा, ये कोई संन्यासी नहीं है। ये नकली लगता है। जानकीजी कहती है, हे यति, गोसांई, आप दुष्ट की तरह वचन बोलते हैं! चेहरा बहुधा बदल सकता है, वाणी बदलनी बहुत मुश्किल है। सीताजी जैसे ही थोड़े आगे आई। रावण ने अपना मूल रूप दिखाया। क्रोधित होकर जानकीजी का अपहरण करके रथ में बैठकर भागा। पंचवटी और गोदावरी का तट रो रहा है। जटायु ने ये दृश्य देखा। जटायु ने जानकी के लिए कुरबानी दी। वहीं से सीता को लेकर रावण आगे बढ़ा। अशोकवाटिका में रावण जानकी को लेकर पहुंचता है और अशोकवाटिका में ये आदमी सीता को जतन करके रखता है। ये रावण समझना बड़ा मुश्किल है! ये आदमी कभी सीता के पास जाता नहीं है। तब गया, जब हनुमानजी पहले आ गये थे। थोड़ा पाप का डर भी लगता होगा। यहां प्रभु आश्रम जानकीहीन देखकर रोने लगते हैं! मेरी सीता कहां? लक्ष्मणजी ढ़ाढ़स देते हैं। ऐसे करते-करते आगे बढ़े। जटायु ने सब कथा कही। जटायु को पितातुल्य आदर दिया। जटायु की गति करके भगवान आगे बढ़े। कबंध नामक राक्षस मिला। कबंध को मारा। उसके बाद प्रभु शबरी के आश्रम में आये। शबरी के आश्रम में प्रभु ने फल-फूल खाये। नवधा भक्ति की चर्चा की। और फिर शबरी के मार्गदर्शन में पंपासरोवर गये। शबरी योगअग्नि में लीन हो गई। नारद आये। नारद ने स्तुति की। 'अरण्यकांड' पूरा किया। बीच में 'अयोध्याकांड' पूरा हो गया समझना। राम का ब्याह कर दिया। फिर राम का वनवास हो गया। चित्रकूट में गये। फिर दशरथजी की मृत्यु हो गई। भरत आदि सब चित्रकूट

आये। लौट गये। भगवान इतने साल चित्रकूट रहे। फिर भगवान ने स्थळांतर किया। पंचवटी में आये। फिर आगे की कथा मैंने क्रम में सुनाई।

'किष्किन्धा' के आरंभ में भगवान प्रवर्षण पर्वत पर पहुंचे। सुग्रीव मिले। हनुमानजी द्वारा मैत्री हुई। वालि का विनाश हुआ। सुग्रीव को राज मिला। अंगद को युवराजपद मिला। और रामजी ने चातुर्मास प्रवर्षण पर्वत पर किया। चार महिने के बाद जानकी की शोध की योजना बनी। बंदर-भालू की चार टुकड़ी बनाई। दक्षिण की टुकड़ी के नायक है अंगद। हनुमानजी, जामवंतजी उसमें है। टुकड़ी जाती है। स्वयंप्रभा मिलती है। कुछ मार्गदर्शन पाया। समुद्र के तट पर संपाति मिला। संपाति ने मार्गदर्शन किया कि सीता लंका में है। आप में से कोई लंका जाय। प्रश्न उठा, अब जाये कौन? आखिर में हनुमानजी को आह्वान किया कि आपका अवतार तो राम के लिए है, आप चूप क्यों हो? हनुमानजी पर्वताकार होते हैं और हनुमानजी लंका जाते हैं। और वहां 'किष्किन्धा' पूरा हो जाता है। 'सुन्दरकांड' शुरू होता है -

जामवंत के बचन सुहाए।
सुनि हनुमंत हृदय अति भाए।।

कई बाधायें बीच में आती है। हनुमानजी लंका में आते हैं। रावण के भवन में गये। भोग देखे। एक-एक मंदिर देखे। कहीं सीता न मिली। एक भवन देखा। तुलसी का गमला है। रामनाम अंकित भवन है। हनुमानजी सोचते हैं, यहां वैष्णव कहां से आया? भौर होते विभीषण जागते हैं और दो वैष्णवों का विभीषण के आंगन में मिलन होता है। विभीषण ने हनुमानजी को सीतादर्शन की युक्ति बताई। हनुमानजी पुष्पवाटिका में। माँ का वृक्ष के उपर बैठकर दर्शन। माँ बहुत दु:खी है। बीच में रावण आ गया। और माँ जब बहुत दु:खी हो गई तब हनुमानजी ने रामनाम की मुद्रिका डाली। चकित मुख से मुद्रिका ली। पहचान तो गई, लेकिन शंका हुई कि ये मुद्रिका कौन लाया? हनुमानजी घटा में बैठकर रामजी के गुण गाने लगे। जानकीजी के दु:ख भागने लगे। हनुमानजी प्रकट होते हैं। माँ को पुत्र मिल गया। पुत्र को माँ मिल गई। संदेश दिया। माँ ने बहुत बड़े आशीर्वाद दिया। और हनुमानजी को भूख लगी। फल खायें, तरु तोड़ें। इन्द्रजित बांधकर रावण के दरबार में ले गया। बातें हुई। रावण माना नहीं। हनुमानजी की पूंछ जलाई। हनुमानजी ने पूरी लंका जला दी! भक्ति का दर्शन करता है उसको जगतरूपी लंका निंदा करके द्वेष करके आरोप करके जलाने की कोशिश करती है। लेकिन माँ के दर्शन करके राम के पास से आया हुआ कोई साधक वो निंदाओं से जलेगा नहीं, निंदा करनेवाले खुद जल जायेंगे, ऐसा तात्त्विक अर्थ होता है। हनुमानजी ने समंदर में स्नान किया। माँ के पास गये। माँ ने चूडामणि दी।

हनुमानजी आये। सुग्रीव के पास गये। जामवंत ने सब कथा सुनाई। राम के पास आये। राम और हनुमान भेंटे। सेना को लेकर प्रभु समुद्र के तट पर आये हैं। तीन दिन अनसन पर बैठे हैं। यहां रावण की सभा में गंभीरता। विभीषण ने सही सलाह दी। विभीषण का त्याग किया। विभीषण भगवान की शरण में। समुद्र जवाब देता नहीं। प्रभु ने तीर उठाया। समुद्र ब्राह्मण के रूप में खड़ा हुआ कि आप मुझे जला दोगे तो जलचर का नाश होगा। आप सेतु बनाओ। नल-नील आदि के सहयोग से सेतु बना। दिव्य भूमि मानकर भगवान ने वहां रामेश्वर भगवान की स्थापना की। उत्तम धरणी पर भगवान शिव का स्थापन हुआ।

सेना लंका में। सुबेल पर डेरा। सामने रावण का मनोरंजन। मनोरंजन भंग। दूसरे दिन राजदूत के रूप में अंगद संधि का प्रस्ताव लेकर गया। संधि सफल नहीं हुई। युद्ध अनिवार्य। घमासाण युद्ध हुआ। इन्द्रजित निर्वाण। कुंभकर्ण निर्वाण और अंत में इकत्तीसवें बाण से रावण का निर्वाण होता है। रावण गिरता है। रावण की तेजस्विता प्रभु के चेहरे में समा जाती है। मंदोदरी शोक व्यक्त करती है। रावण का संस्कार हुआ। विभीषण का राजतिलक हुआ। प्रभु पुष्पक विमान से अयोध्या की और उड़ान भरते हैं। रामेश्वरजी का दर्शन किया। मुनिगणों को मिलते-मिलते परमात्मा शृंगबेरपुर गये। हनुमानजी अयोध्या गए।

'लंकाकांड' के बाद 'उत्तरकांड' में भरतरूपी जहाज विरह में डूब रहा था। हनुमानजी ने जाकर बचा लिया। सब कुशल खबर दी। प्रभु आ रहे हैं। भगवान प्रयाग का दर्शन करते हुए, सरयू का दर्शन करते हुए अयोध्या ऊतरते हैं। विमान में बंदर के रूप में बैठे थे वो मानव के रूप में ऊतरे। सबको मानव बनाने की एक ये फोर्म्यूला थी। भगवान-लखन-जानकी नीचे ऊतरे। भरतजी दौड़े! भरतजी और राम भेंटे तब पता ही नहीं रहा कि किसका वनवास था? गुरुदेव को प्रणाम। सब संतों को मिले। परमात्मा ने यहां अपना ऐश्वर्यरूप प्रकट किया। अनेक रूप धारण किया। प्रत्येक व्यक्ति को भगवान उनकी जैसी भावना थी उसी रूप में मिले।

सबसे पहले भगवान कैकेयी के भवन में गये। ग्लानि, संकोच दूर किया। सुमित्रा और कौशल्या को प्रणाम किया। जानकीजी ने प्रणाम किया। वशिष्ठजी सब आये, 'आज ही तिलक कर दे। कल का भरोसा नहीं।' दिव्य सिंघासन मांगा। पृथ्वी को प्रणाम करके, सूर्य को प्रणाम करके, दिशाओं को, माताओं को, जनताओं को सबको प्रणाम करते हुए राम अयोध्या की गादी पर विराजमान। वशिष्ठजी राम के भाल में रामराज्य का तिलक करते हैं-

प्रथम तिलक बसिष्ट मुनि कीन्हा।
पुनि सब बिप्रन्ह आयसु दीन्हा।।

जयजयकार हुआ। भगवान शंकर स्वयं पधारे। परमात्मा की स्तुति की और सत्संग की मांग करके शिव कैलास गए। रामराज्य स्थापन हुआ। प्रेमराज्य का स्थापन हुआ। छ: महिने के बाद जो आये थे सबको विदा दी। हनुमानजी सतत यहां रहे। कुछ समय के बाद जानकीजी ने दो पुत्रों को जनम दिया। ऐसे ही तीनों भाईयों के घर भी दो-दो पुत्र हुए। रघुवंश के वारिस के नाम बताकर तुलसी ने रामकथा रोक दी। विवाद और अपवादवाले प्रसंग तुलसी ने 'मानस' में समाविष्ट नहीं किया। फिर कागभुशुंडि की कथा। गरुडजी का मोह। गरुड ने रामकथा सुनी। आखिर में सात प्रश्न पूछे। बुद्धपुरुष कागभुशुंडि ने सातों प्रश्न के उत्तर दिए। गरुड धन्यवाद करके, गुरु के चरण में प्रणाम करके वैकुंठ चला गया। कथा पूरी हुई। याज्ञवल्क्य महाराज भरद्वाजजी से कथा कर रहे थे वहां भी विराम हो ना हो खबर नहीं। महादेव पार्वती के सामने कथा कर रहे थे। शिव ने कथा समाप्त की। तुलसीदासजी आखिर में कहते हैं कि-

जाकी कृपा लवलेस ते मतिमंद तुलसीदासहूँ।
पायो परम बिश्रामु राम समान प्रभु नाहीं कहूँ।।

इस नवदिवसीय रामकथा जो 'मानस' के गोदावरी के रूप में गाई गई। उसका बहुत बड़ा प्रेमफल हम और आप सब मिलकर कुंभस्थ अवसर पर सबको साथ में लेकर माँ गोदावरी में बहा दें, 'हे माँ, माँ गोदावरी, हमने गाई ये कथा का फल तेरे चरण में हो, प्रवाह में हो।'

तात्त्विक दृष्टि से ये भी अच्छा लगता है कि वट के नीचे ही कथा हो; क्योंकि वट विश्वास का प्रतीक है, ध्रुवता का प्रतीक है। इसलिए कथा तो विश्वास की छाया में ही होनी चाहिए। संशय और संदेह की छाया में तो कथा कथा नहीं रहती, व्यथा निर्मित करती है। वटवृक्ष का चुनाव बड़ा आध्यात्मिक है। अक्षयवट का सीधा-सादा अर्थ है कि उसका क्षय नहीं होता, इसका नाश नहीं होता। वट का वृक्ष कभी हमारी पात्रता सिद्ध करता है। साधक की अचलता की ओर इंगित करता है वट का वृक्ष। ये भजन हम करेंगे तो हमारा क्षय नहीं होगा। ये भी वटवृक्ष का किसी न किसी रूप में तात्त्विक संकेत है।

मानस-मुशायरा

ये आप पर है तुम चाहो न चाहो,
लेकिन तुम को ज़माना चाहता है।
– सत्यप्रकाश शर्मा

तेरी खुश्बू का पता करती है।
मुझ पे एहसान हवा करती है।
– परवीन शाकिर

बस अपना ही गम देखा है।
तूने कितना कम देखा है?
–विज्ञानव्रत

किसको पत्थर फ़ेंके केसर, कौन पराया है।
शिशमहल में हर एक चेहरा मुझ–सा लगता है।
– कैसर

खुदा तुझे, तू मुझे याद बात एक ही है।
खुदा तेरे, तू मेरे साथ बात एक ही है।
खुमार रबका मेरा दिन गुजार देता है।
तेरे नशे में कटे रात बात एक ही है।
– राज कौशिक

वाइज़े महोतरम इस तरह आपका
बादाखाने में आना बुरी बात है।
अब आ ही गये तो थोड़ी पी लीजिए,
बिन पीये लौट जाना बुरी बात है।

क्वचिदन्यतोऽपि

पूजाभाव से किया सत्कर्म करुणा की क्रीड़ा है

'श्री विद्यागुरु फाउन्डेशन' द्वारा आयोजित साहित्य-शिक्षण सन्मान
पर्व के अवसर पर मोरारिबापू का उद्‌बोधन

श्री विद्यागुरु फाउन्डेशन की इस पर्व पंचमी की शाम को पुन: आप सब आदरणीय गुरुजनों से मिलने का, श्रवण करने का, आप सबके दर्शन करने का अवसर मिला है। मैं आनंद व्यक्त करता हूं। समग्र कार्यक्रम के केन्द्र में 'आदर्श' शब्द काफी इस्तेमाल हुआ है। इस सभी के केन्द्र में एक जीवन्त शिक्षकत्व है, एक ऐसी सरल-तरल व्यक्ति है जो है आदरणीय रतिबापा बोरीसागर। इस व्यक्ति के पास कितनी संपदा है! सावरकुंडला में मिलनेवाले बहुत अहोभाव से कहते हैं, हम रतिबापा के विद्यार्थी थे। एक ऐसी व्यक्ति जिन्होंने इस फाउन्डेशन में से अपना नाम कमी करवा दिया। एक बहुत ही सात्त्विक सद्‌प्रवृत्ति का आरंभ हुआ।

मानसतासाहब के सपनें यों पूरे होते रहते हैं। सपनें उनके, आनंद मेरा! वर्ना कर्ज चढ़ाकर, व्यर्थ खर्च करे दूसरे और कथा करने मुझे बुलाए, बापू, अब पूरा नहीं होता तो एक कथा कर दीजिए! पर यहां ऐसा नहीं है। वे सपनें देखते हैं। शायद उनके सपनें बंद आंखों से नहीं देखे गए हैं। खुली आंखों से देखे गए हैं। बंद आंखों से

आते सपनों की हकीकत क्या है, मनोविज्ञान संशोधन कर रहा है। इसमें कोई 'इति' नहीं कह सका है। सपनें केवल चित्रात्मक होते हैं कि शब्दात्मक भी होते हैं, इस पर आजकाल बड़ा विवाद चल रहा है! निर्णय नहीं होते। यह आदमी खुली आंख से सपनें देखता हैं, जो सच हो रहे हैं। मुझे ख्याल नहीं था कि एक साल में ही प्रारंभ हो जायगा! अभी हम चार बजे अपनी आंखों से देख आए हैं; ऐसे सपनें देखकर गाडी में बैठकर एक मिनट आंख बंद करने की इच्छा हुई कि खुली आंख से देखें सपनों पर सोचता था कि यह सब कैसे हो रहा है? हरेशभाई और आप गुरुजन इसमें शामिल है। यही भाव रहेगा तो सब ठीक होगा। मैं कोई भविष्यवेत्ता नहीं हूं। मैं हर्षभाव से कहूं और फलित न हो तो अन्यथा न लेना। मैं अपना हर्ष व्यक्त करता हूं। आदरणीय गुणवंतभाई कहते थे उल्लास हंमेशा पवित्र होता है। ऐसा लगता है कि एकदम निरपेक्ष भाव से कार्य शुरू हो चुका है। इन चेहरों पर से ही लगता है कि इन्हें कोई अपेक्षा नहीं है। मुझे एक शे'र याद आता है।

तुम्हें देखकर हाथ फैला दिये हैं।
मैं जानता नहीं कि मैं चाहता क्या हूं?

ये लोग भी ऐसे हैं। उन्हें पता नहीं या तो उन्हें कोई चाह नहीं है। और चाह हो तो एक ही है। यह कितना बड़ा संकल्प है साहब! मैं कथा में कहता रहता हूं, अन्य सभाओं में भी कहा है कि मेरे देश में जिन्हें भोजन नहीं मिलता उन्हें आदर के साथ मिलना ही चाहिए नि:शुल्क प्रसाद के रूप में। एक साधु के स्वभाव में यह सब जिन्स में होता है इसलिए भी ऐसी इच्छा होती है। स्वामी शरणानंदजी कहते थे कि भूखे आदमी को रोटी दीजिए तब उसकी पात्रता ही उसकी भूख है। 'तू निकम्मा है, तू मांगकर खाता है, एकदम फ़ालतू है!' ना, यह सब रहने दीजिए। उसकी भूख ही उसकी पात्रता है। एक दर्दी बिना दवा के मरता हो तो यह नहीं कहते कि तू रात को पीता है! तू ऐसा करता है! यह सब बाद में। फिलहाल उसकी बीमारी तो औषधि के पात्र है। सर्दी में कोई वृद्ध या कोई बच्चा सोया हो। अभी ऐसी तसवीरें आती हैं, देखकर रोना आ जाय! एक लड़का इस सर्दी में खुद अपने भाई को ढंक लेता है! ऐसा एक चित्र है! ऐसे चित्र दिल्ही के मिनिस्टरों के घरों में लगा देने चाहिए! हम ऐसे चित्र देखते हैं! ऐसे पददलितों को एकाद कम्बल देना चाहिए। यही उनकी पात्रता है। पता नहीं, मेरे देश में ऐसी पूजा कब शुरू होगी? उसके पूजारी कब प्रकट होंगे? पर प्रकट हो रहे हैं।

मैं कहूं कि नि:शुल्क औषधि मिलनी चाहिए। मुझे पता है कि यह तरंगी विचार था। वल्लभभाई पटेल गुजरात के आरोग्यमंत्री थे। एक सभा में हम साथ थे। उसने कहा कि मेरा चले तो मैं किसी भी डोक्टर को प्राईवेट प्रेक्टिस न करने दूं। मैं भी बैठा था। मेरा भी चले तो मैं किसी भी शिक्षक को प्राईवेट ट्युशन न करने दूं। खेर! आप कल्पना भी न कर सको कि कोइ ऐसी होस्पिटल हो और यह भी गांव में, जहां केस कढाने से सारवार पूरी हो तब तक एक भी पैसा न देना पड़े! फिर वो कीडनी का दर्दी हो या अन्य विभाग का, सादर आरोग्य का प्रसाद बेचना; काम बहुत कठिन है। पर विश्वासपूर्ण विचार उसे सरल बना देगा। गार्गी ने गाया, 'मैं तो हूं विश्वास।' साहब, क्या नहीं हो सकता? आरंभ हो चुका है। इसके निर्वाह के लिए प्रति माह दस लाख रूपये की व्यवस्था अभी हो चुकी है। यहां तिथि लिखने की बात हुई। आप मेरी एक तिथि लिखे। मेरी कोई खास तिथि नहीं है। मैं जगत में अतिथि हूं। यह कोई शब्दरचना नहीं, साहब!

आया तेरी नगरी में, जब तक है दाना-पानी।

हम सब अतिथि है। जिस तरह शालीनता और विवेक से यजमान के घर रहते हैं उसी तरह इस दुनिया में थोड़ा-सा

रह ले तो उपनिषद का मंत्र सार्थक हो, 'अतिथि देवो भव।' अत: मैं कोई तिथि कहना नहीं चाहता। आपको जो पसंद हो वही लिखियेगा। क्या देना? आशीर्वाद! बस! एक लाख रूपया। चित्रकूट के हनुमानजी के पास संकल्प रखकर। वो मेरा यार हैं! 'तोहिं मोहिं नाते अनेक।' मेरा तुलसी 'विनयपत्रिका' में लिखता है -

तोहिं मोहिं नाते अनेक, मानियै जो भावै ।
ज्यों त्यों तुलसी कृपालु ! चरन-सरन पावै ।।
तू दयालु, दीन हौं, तू दानि, हौं भिखारी ।
हौं प्रसिद्ध पातकी, तू पाप-पूंज-हारी ।।

मेरे उसके साथ अनेक प्रकार का संबंध है। अत: चित्रकूट के हनुमानजी की प्रसादी रूप एक तिथि जो भी आपको अनुकूल लगे लिख लीजिए। जिससे मैं प्रसन्न रहूंगा। मैंने उमंग से रामकथा दी है। मैं ओर तो क्या दूं? मैं तो ऐसा हूं। और मैंने कहा है कि मैं केवल रामकथा नहीं, यजमान भी दूंगा। नमक की डली से लेकर रामकथा का प्रेमयज्ञ पूरा हो ऐसे एक स्वप्न को सफल होने तक सब कुछ। वल्लभाचार्य भगवान ने मानसी, वित्तजा और तनुजा ऐसे सेवा के प्रकार बताए हैं। पुष्टिमार्ग में वित्तजा सेवा पैसा द्वारा होती सेवा। तनुजा माने शरीर द्वारा और मानसी माने मन द्वारा होती सेवा। मन की ऐसी पवित्र उमंग हो तो पैसे देनेवालों की कमी नहीं होती। प्रभुकृपा से पिछले तीस वर्षों से लोग जो दान दे रहे हैं! हम को तो लगे, लोग पैसे उछाले जा रहे हैं! तुलसीदासजी ने 'रामचरित मानस' में लिखा है -

प्रगट चारि पद धर्म के कलि महुँ एक प्रधान ।
जेन केन बिधि दीन्हें दान करइ कल्यान ।।

सतयुग में धर्म के चार चरण सत्य, शौच, दया, दान थे। चारों के ऊपर धर्म था। त्रेता में सत्य हिल गया। तीन चरण पर धर्म रहा। द्वापर में दो चरण पले गए। कलियुग में तो शौच, सत्य, दया सब चले गयें। केवल दान रहा है। फिर भी वह दानधर्म आदमी 'जेन केन बिधि दीन्हें।' कवियों ने ऐसा भी लिखा है। मुझे लगता है कि संजोगानुसार सुपात्र ना मिले तो कुपात्र को दान दीजिए। सुपात्र न मिला तो? छोड़ दो। पर गरीब को औषधि देना यही उसकी पात्रता है। नि:शुल्क देनी है। 'नि:शुल्क' शब्द ने मुझे बहुत आनंद दिया है। मैं अपने विचार रख सकता हूं या नहीं, मुझे पता नहीं। लेकिन ऐसा कर सकते हैं। आर्किटेक्ट भाइ ने इतना सुंदर रूप खड़ा किया है इसमें एकाद गुंबद हो तो मंदिर ही लगे! साहब, अभी तो मोडर्न टाईप के मंदिर बनते हैं। तो इसमें एकाद गुंबद हो तो मंदिर हो जाय!

उपनिषद में एक दृष्टांत है। मेरे पास अभी समय नहीं है। मैं खड़ा-खड़ा बोलूं तब मुझे पता है यह कथा नहीं है। मैं बैठकर बोलूं तो चार-पांच घंटे लग ही जाए। मैं खुद को समझाऊं कि मोरारिबापू ध्यान रखना, घडी का ध्यान रखना। अभी-अभी बोरीसागरसाहब, जैनकी सभा में गया तो मेरी बगल में एक कथाकार बैठे थे। दूसरी ओर आचार्य बैठे थे। मैं अतिथिविशेष था। वो शाल ओढाने आए। जैनों की शाल सुंदर होती है। सुंदर, महीन, पतली, पीले रंग की कीमती शाल! मैं शाल को ओढ-ओढकर जान गया हूं कि यह ठीक है, यह रफ है, इसमें दम नहीं है! साहब, यह कश्मीर से आई है, नंबर वन है, साहब!

सांई तने जो रंगनी समजण लगीर होत.
तुंये वणे छे वस्त्र तो तुं ये कबीर होत.

ऐसा रमेश पारेख कहते थे। रंग की समझ-कद्र होनी चाहिए। हरेशभाई, आपने सुंदर गाया। आप कविता लिखते हैं यह मुझे अच्छा लगा। संस्था के ट्रस्टी गाते हो यह मुझे अच्छा लगा। कई ट्रस्ट के ट्रस्टी गाते नहीं, खाते हैं! सरकारी क्षेत्र में तो गाना बिलकुल छूट गया है! मैं बहुत प्रसन्न हुआ। इस देश के कर्णधार हंसते नहीं। कभी

भी सरल-तरल नहीं मिलेंगे। गाते हुए नहीं मिलेंगे। ओफिस में मेनेजर गाता हो तो कर्मचारी हुलास में रहते हैं कि आज उपालंभ नहीं मिलेगा। क्योंकि आज गुनगुनाते हैं! चाहे फिल्मी गीत हो। क्या हुआ? बाकी जो गाते नहीं वो सब!

हरेशभाई अच्छा लिखते हैं। उनकी एक कविता सुनी। मुझे बहुत पसंद आई। तलगाजरडा में सुनाई थी। बहुत अच्छी थी। आज तो उन्होंने गायन किया। संस्था गाये। संस्था नृत्य करे। संस्था मुस्कुराये। जीवंत लगनी चाहिए। जो सामने हो प्रसन्न हो जाए। एक बिना तंबाकु का पान किसीको खिला दीजिए न साहब, उसकी उदासीनता कम हो जायगी। 'महाभारत' को लेकर मुझे सूझता है कि कर्ण के कवच-कुंडल यदि कृष्ण ने न ले लिए होते तो वह किसीका भी कहा मानकर सत्य की ओर पुनः लौट गया होता। जिस तरह हमारे कान की मशीन कोई चुरा ले जाय और हम श्रवणशक्ति खो बैठे। कृष्ण को लगा, यदि कर्ण वही का वही रहेगा और यदि जान गया कि वह ज्येष्ठ पुत्र है तो वह चेइन्ज हो जाएगा। वह चेइन्ज न हो ऐसी युक्ति कर कर्ण की जो वैज्ञानिकता थी, जो श्रवणकला थी वह छीन ली गई। अतः दुर्योधन का कहा ये सब कान में उतरा। अतः कभी कभी कर्ण 'महाभारत' में पांच हजार वर्ष पहले हमें नापसंद ऐसी बातें कहता हुआ सुनाई पड़ता है!

कल हम संतवाणी में बैठे थे और यह प्रज्ञाचक्षु लक्ष्मणबापा बारोट; कितने सुंदर भजन गाते थे! हार्मोनियम के साथ जो गाते थे! धृतराष्ट्र को हार्मोनियम देकर गाने के लिए कहते, दो सूर छेड़ते तो 'महाभारत' का संग्राम टल जाता! यदि उसे सूर दिया होता तो शरसंधान टल जाता। कर्ण ने जो उनका यंत्र न गंवाया होता तो वह कृष्ण की बात मान लेता! संस्था गाती-नाचती रहनी चाहिए। और मुझे लगता है कि यह संस्था नाचती-गाती रहेगी, अवश्य।

आप मेरी एक तिथि का स्वीकार कीजिए। मैंने कथा सहयजमान दी है। स्थल आप तय कर लीजिए। आप सब सोचकर तय कीजिए। ऐसे सुंदर अवसर पर लोग देखने के लिए भी आयेंगे। बाद में उनके जीव में भी कंपन होगा। जो हुलास का रूप धारण करेगा। यह कोई अस्पताल का विस्तार हो जाय, जयजयकार हो जाय इसलिए नहीं पर इसकी बहुत जरूरत है। सावरकुंडला से विश्व में एक विचार तो जाय कि आप देख आईए, सब निःशुल्क है। फिर हूंडी देने के बारे में सोचा जाय, किसीको ऐसा लगे इतनी बड़ी निःशुल्क सुश्रूषा होती है तो हमें भी कुछ देना चाहिए। फिलहाल ऐसा कुछ भी नहीं है। यह विचार ही बड़ा है। धन्वंतरी की भी इच्छा हो जाय कि देखे ये लोग कैसी सुश्रूषा करते हैं!

साहब, आज इलाज कितना महंगा हो गया है! नाम नहीं ले सकते! चित्रकूट में सुबह से लेकर शाम तक कितने ही आदमी मिलने आते हैं। कहां-कहां पहुंचे, साहब! क्या करें? लोग आकर कहते हैं, हमें ऐसा है! इस देश में ऐसा कब तक चलेगा? इसलिए यह सावरकुंडली विचार! लोहे के बर्तन, तवीता, जारा, सूप यहां का प्रसिद्ध है। साहब, पर यह विचार सुवर्णपात्र बनाने का है। सभी के केन्द्र में एक विद्यागुरु बैठे हैं निरपेक्षभाव से। मैंने कहा, आप कुछ बोलेंगे ही नहीं? कहा, मैं तो नीचे बैठा था। मुझे जबरदस्ती यहां लाये हैं। मैं दो-तीन बार कार्यक्रम पढ़ गया। मेरी इच्छा थी कि बापा कुछ बोले। उनका विनोद का विलास भी बैराग उत्पन्न करे ऐसा है। जिनके पास बैठकर पवित्रता का अनुभव हो वह वैराग्य से सवागुना विलास है। कार्यक्रम में साहब न बोले, खेर! कितना सुंदर विवेक! हा, हमारे 'रामायण' में गुरु की व्याख्या करते तुलसीदासजी ने लिखा है -

गुर बिबेक सागर जगु जाना ।

जगत जान ले कि गुरु विवेक का समुद्र होना चाहिए। अभी तक अपने पास चाहिए ऐसे शीलवान और विवेकशील गुरुजन है, यह हमारे लिए प्रभु की कृपा है। विनोद सर्वोत्तम औषधि है। गांधीजी में क्या कम था? सल्लाभाई ज्यादा कह सकते हैं। आप भी कह सकते हैं। गांधीजी में काफी विनोद था। आप उनका हंसता फोटो देखिए, साहब! बच्चे के प्रति प्रेम करता फोटो देखिए, साहब! इतना अधिक पढ़ा-लिखा अपने जमाने का पर बहुत विनोदी। विल्सन नामक सर थे। पर गांधीजी की तेजस्विता सहन नहीं कर पाते थे। द्वेषभाव रखे। एक तो ऐसी भेदवृत्ति और यह इन्डियन इतना बड़ा तेजस्वी! उससे सहा नहीं गया! फिर उसने इतने कठिन प्रश्न पूछे कि जिसका जवाब गांधी न दे सके। पर गांधीजी ने सारे उत्तर सही लिखे! गौरे साहब को ज्यादा द्वेष हुआ। उसने कागज़ पर 'इडियट इडियट' लिखकर कागज़ लौटा दिया। गांधीजी फिर से पेपर लेकर गए और कहा, 'सर, आपने हस्ताक्षर तो अच्छे किए पर मार्क्स देना भूल गए हैं!' यह निर्दोष विनोद है।

रतिलाल बोरीसागर साहब को किसीने अभी कहा कि भगवान आपको तंदुरस्ती भरा दीर्घायु दे। अस्पताल तैयार हो जाय तब साहब को अस्पताल में एक राउन्ड लगवाईयेगा। जिससे उनकी मुस्कुराहट एक नई औषधि देती रहे। एक नई तंदुरस्ती दे। ऐसा सब अस्पताल में जरूरी है। हास्य जरूरी है।

तो बाप, और तो क्या कहूं? अब गेंद आपके हाथ में है। मुझे हुक्म दीजिए। थोड़ा समय देना। पर समय नहीं दोगे तो भी ज्यों-त्यों करके मार्ग निकालूंगा। कथा तो सब श्रद्धापूर्वक मुझसे लेने आते हैं। पर मुझे कहने दीजिए, मैं कथा देने आया हूं। हम कथाकार को क्या है? ये नेटवर्क करते हैं कि भाई, बैसाख महिना है, हमारी एकाद कथा रख दीजिए! जो भी खर्च होगा यह मैं दक्षिणा में से आधा दे दूंगा! तबलेवाले को तू देना, हार्मोनियमवाले को मैं दूंगा! माईकवाला पहचानवाला है। आधी कीमत पर हो जायगा! पर मेरा कुछ कीजिए! ऐसा मैंने अपनी जिन्दगी में नहीं किया है। मैं जो हूं बराबर हूं। एक बहुत पवित्र विचार बरसों से मेरे दिमाग में चल रहा है कि हम निःशुल्क इलाज कर सके। ऐसा होने जा रहा है इसीलिए कथा दे रहा हूं। अब गेंद आपके हाथ में हैं। जब कहेंगे हम तैयार है। आपकी अनुकूलता वही मेरी अनुकूलता। स्थल-काल जो भी तय हो।

मुझे आगे जाना है, तो मैं पूरा करूं। यहां जो गुरुजन बैठे हैं। परमात्मा उन्हें खूब समय दे कि हमें मार्गदर्शन दे सके। ऐसे सपनें देखिए। यदि ऐसा न हो सके तो ऐसे सत्कर्म-भजन संपदा से इसे सबल कीजियेगा। आप जिस पंथ के उपासक हो दुआ कीजियेगा। भगवतीकुमार शर्मा की कविता इस उम्र हो तब विचारणीय है। साहब, दो ही पंक्ति याद है। मेरा फायदा यह है कि मैं दो ही पंक्तियां कहूं तो श्रोताओं को ऐसा लगे कि बापू को समय नहीं है, इसीलिए पूरा गाते नहीं है! पर ईश्वर लाज रखता है! ऐसे ही लाज रखना। हरेशभाई ने गाया तो मैंने सोचा, दो पंक्तियां मैं भी गा लूं -

हरि, मने अढी अक्षर शिखवाडो...

हे परमात्मा! अब मुझे अढी अक्षर सिखाइए। दूसरा कुछ नहीं चाहता।

हरि, मने अढी अक्षर शिखवाडो!
एंशीने आरे आव्यो छुं;
मारो अगर जिवाडो!
पोथी पंडित बनी रींगणां
पोथीमां ज वघार्यां,
शब्दब्रह्मनां करी चूंथणां
सारतत्त्व संहार्यां.

गरबड करी गनाने,
ग्रंथनो भार तमे उपाडो!
हरि, मने अढी अक्षर शिखवाडो!

कुछ तो हमारी व्यासपीठ को भी लागू होता है। बहुत अच्छा लिखा है लेकिन आगे का समयाभाव के कारण गाउंगा नहीं। साहब, सच्चे सपनें साकार होंगे। प्रणव ने अभी सत्य-प्रेम-करुणा की व्याख्या की। अनेक रीति से इन तीन शब्दब्रह्म की व्याख्या होती रही है। पर यह सपना एक वर्ष में ही सत्य बना यह मेरे साथ सत्य प्रकट हुआ है। गाना भी प्रेम है। बिना प्रेम के कोई गा नहीं सकता। सूर हो या न हो, भगवान सब ठीक कर देता है। फिल्मीगीत है प्रेम को लेकर -

हर दिल जो प्यार करेगा, वो गाना गायेगा...

मैं तो शास्त्रों में से जितने प्रमाण हो सके देता जाऊं। संदर्भ मेरा होता है।

हर दिल जो प्यार करेगा, वो गाना गायेगा,
दीवाना सेंकडों में पहचाना जायेगा...

हरेशभाई ने गाया तो प्रेम आ गया। मानसतासाहब और पूरी टीम ने तय किया कि नि:शुल्क करना है। नकद करुणा है। इससे ज्यादा करुणा क्या हो सकती है? संस्कृत के शिवसूत्र में करुणा के लिए सूत्र है, 'करुणैवकेलि।' करुणा जिसकी क्रीडा है। हम मोर्निंग वोक लेते हैं। बाहरगांव आते हैं और कोई वाहन न मिले तो ओफिस पैदल जाने से थक जाते हैं! मोर्निंगवोक स्वीकृत है अत: थकान नहीं लगती। सातवें माले पर रहते आदमी को भी हलका होने के लिए वोक करने तो नीचे ही आना पड़ता है। ऊपर ही ऊपर दस बाय दस के कमरे में तो वोक नहीं हो सकती। टोक हो सकती है! अगल-बगलवाले सुनते हैं। तो, चिंतित होकर छत पर डाला जाय। छत पर ज्यादा वोक नहीं कर सकते। क्योंकि प्राय: सभी टेन्शन में होते हैं। छत के किनारे को पकड़कर चलता है। सहसा कोई विचार आए या चक्कर आए तो हम जाय नीचे और भीतरवाला जाय ऊपर! अत: वोक के लिए तो नीचे ही जाना पड़े। वही हम चलकर हल्के-फूल्के हो सके। इसी तरह पूरी जिंदगी बुद्धि के माले पर रहे हो और वहां से कभी निर्भार होने के लिए हृदय में नीचे वोक करने निकलना चाहिए। 'हरि, मने अढी अक्षर शिखवाडो।' यह करुणा केलि है। करुणा ही साधकों की क्रीड़ा है। दर्दियों के प्रति जिस पूजाभाव से होता सत्कर्म का आरंभ करुणा की क्रीडा है। यह करुणा नर्तन करती क्रीड़ा है। ऐसा मुझे लगता है।

मैं पुन: अपनी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। मैं पूरा आपके साथ हूं। इसका यह अर्थ नहीं कि मैं आधा कहीं और हूं! मुझे यह बात हृदय से पसंद है। मेरी बुद्धि ने निर्णय किया है कि मुझे कथा कैसे करनी है। मेरा चित्त दृढ हो चुका है और अंतिम कारण, किसी में अहंकार नहीं है। अत: मन, बुद्धि, चित्त यों है; अहंकार नहीं है इसीलिए कार्य सुंदर होगा। सपना सच होगा। 'रामायण' में लिखा है -

एही कर होइ परम कल्याना।

हे ईश्वर! सबका शुभ हो ऐसा कर!

सोइ करहु अब कृपानिधाना।।

हे परमात्मा! अब तू ऐसा करना।

सर्वे भवन्तु सुखिन:।
सर्वे सन्तु निरामया।

मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं, बाप! बार-बार प्रसन्नता व्यक्त करता हूं ऐसा बोलने की आवश्यकता नहीं है। पर आपको भी पता चले, बापू प्रसन्न है।

'श्री विद्यागुरु फाउन्डेशन' के उपक्रम में साहित्य-शिक्षण सन्मान पर्व के अवसर पर सावरकुंडला (गुजरात) में प्रस्तुत वक्तव्य, दिनांक : ७-१-२०१५

॥ जय सीयाराम ॥